९

उपल पात, जल पात, भयङ्कर वज्रपात भी सहते हैं;
देहपात तक भी सहने में कोई कुछ नहिं कहते हैं।
किन्तु असह्य उरोजपात का करते ही सुविचार
तेरी विषम-बुद्धि पर बुध-वर हँसते हैं शत बार ॥

१०

कटु इन्द्रायण में सुन्दर फल! मधुर ईख में एक नहीं!!
बुद्धिमान्द्य की सीमा तूने दिखलाई है कहीं कहीं।
निपट सुगन्धहीन यदि तूने पैदा किया पलाश,
तो क्या कञ्चन में भी तुझको करना न था सुवास?

११

विश्व बनानेवाला तुझको सब कोई बतलाते हैं;
विहग बनाने में भी तेरी भूल किन्तु हम पाते हैं।
यदि तेरे कर में कुछ होता कला-कुशलता-लेश,
काक और पिक एक रङ्ग के क्यों होते लोकेश?

१२

वायस विहरें हैं गलियों में; हँस न पाए जाते हैं;
कण्टकारिसबकहीं;कमलकुलकहींकहींदिखलाते हैं।
मृगमद पाने का क्या कोई था ही नहीं सुपात्र,
जो तूने उससे पशुओं का किया सुगन्धित गात्र?

१३

नित्य असत्य बोलने में जो तनिक नहीं सकुचाते हैं,
सींग क्यों नहीं उनके सिर पर बड़े बड़े उग आते हैं?
घोर घमण्डी पुरुषों की क्यों टेढ़ी हुई न लङ्क?
चिन्ह देख जिसमें सब उनको पहचानते निशङ्क॥

१४

दुराचारियों को तू प्रायः धर्म्माचार्य बनाता है;
कुत्सित-कर्म्म-कुशल कुटिलों को अक्षरज्ञ उपजाता है।
मूर्ख धनी; विद्वज्जन निर्धन; उलटा सभी प्रकार।
तेरी चतुराई को ब्रह्मा! बार बार धिक्कार॥

१५

घोड़े जहां अनेक, गधों का वहां काम क्या था? सच कह;
विदित होगई तेरी सारी चतुराई; तू चुप ही रह।
शुद्धाशुद्ध शब्द तक का है जिनको नहीं विचार,
लिखवाता है उनके कर से नए नए अख़बार॥

१६

विधे! मनोज्ञ-मातृभाषा के द्रोही पुरुष बनाना छोड़;
रामनाम सुमिरन कर बुड्ढे और काम से अब मुख मोड़।
एकानन हम, चतुरानन तू; अतः कहें क्या और विशेष?
बुद्धिमान जन को इतना ही बतलाना बस है भुवनेश!

शीशे के कारख़ाने
और
मिस्टर वागेल्

पण्डित नीलकण्ठ वागेल् महाशय जाति के महाराष्ट्र ब्राह्मण एक उच्चकुल के मेम्बर और बम्बई यूनीवर्सिटी के ग्रेजुएट हैं। घर से सम्पन्न और बड़े बुद्धिमान चतुर हैं। यदि चाहते तो वकालत या डाक्टरी की शिक्षा लाभ करके अपनी आत्मोन्नति करते। पर नहीं, धन, योग्यता और सौशील्य के साथ सर्वशक्तिमान् ईश्वर ने आपको साहस और पुरुषार्थ भी दिया है। आप विलायत गए-बारिस्टरी की शिक्षा पास करने नहीं, वरञ्च काँच के बर्तन बनाने का काम सीखने, जिस कार्य में आप विज्ञ हो कर अब बम्बई लौट कर आरहे हैं, जहां अपना कारख़ाना खोलेंगे। इस होनहार युवक महाराष्ट्र ब्राह्मण को कैसी कैसी कठिनाइयां और आपत्तियां काँच के काम सीखने में पड़ी हैं, वे सब सुनने ही योग्य हैं। इनको अनेक कारख़ानों में मारे मारे फिरना पड़ा। कारख़ानेवाले अंग्रेज़ों ने कहा हम आपको काम नहीं सिखलावेंगे।

आप इसका पूरा पूरा वृत्तान्त मिस्टर वागेल के लेक्चर से, जो उन्होंने गत १७ दिसम्बर, १९००, को लण्डन नैशनल ऐसोसिएशन के अधिवेशन में, सभापति लार्ड रे महोदय, पूर्व गवर्नर बम्बई, के सन्मुख दिया, भली भांति जानेंगे कि इन्हें कैसी कैसी कठिनाइयां और क्लेश सहने पड़े। कांच का काम सीखना सुगम नहीं है। इसमें कितना शारीरिक कष्ट सहना पड़ता है। कारख़ाने में इतनी कड़ी आंच और गरमी रहती है कि मुंह जल जाने का भय

रहता है। शरीर में दाने दाने पड़ जाते हैं। कुलियों में कुली बनकर रहना पड़ता है। सब प्रकार के कष्ट मिस्टर वागेल् ने, अपने देश के वासियों के लिये लाभदायक व्यापार स्थापित करने में, सहे और झेले। सर जार्ज बर्डउड ने, जो उस सभा में उपस्थित थे, लेक्चर सुनकर कहा कि भारतवर्ष के युवा पुरुष काँच के काम में लाभ प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि शोशे और कांच के बरतनों की भारतवर्ष में बड़ी खपत है। फिर सर जान जार्डन ने कहा, कि भारतवर्ष में कांच की चूड़ियों का बड़ा व्यापार और उसकी खपत है, इस कारण इस कार्य्य में विशेषोन्नति भारतवर्ष में हो सकती है। इसके उपरान्त लार्ड रे ने कहा कि भाग्यवश कैसा उत्तम संयोग हुआ है कि पहिले पहल जो हिन्दोस्तानी काँच के बरतन बनाने का काम सीखने विलायत आए वे ग्रेजुएट हैं, जो अपने देश में जाकर अपने सहयोगी देशवासियों से कह सकेंगे कि द्रव्योपार्जन और जीविका लाभ करने के लिये सरकारी नौकरी के अतिरिक्त भी अनेक व्यापार-सम्बन्धी बड़े बड़े काम खोले जा सकते हैं। इस समय भारतवर्ष में इसकी आवश्यकता है कि विचारपूर्वक अनुसन्धान वा जांच की जावे कि किस प्रकार की कारीगरी के माल की खपत अधिक है। इसके उपरान्त वह कारीगरी हिन्दोस्तानी सीखें और उसके कारख़ाने जारी करें। इस बात का अनुसन्धान करना और इसमें विज्ञता लाभ करनी कि कौन कौन से कारख़ाने किस प्रकार के किस किस स्थान पर खुल सकते हैं, गवर्नमेण्ट का काम होना चाहिए। फिर मिस्टर वागेल् की आपत्तियों और कठिनाइयों का वर्णन करके लार्ड महोदय ने कहा कि हमारा कर्त्तव्य और धर्म है कि हम अंगरेज़ कारख़ानेवालों को मनोगत करें कि वे अपने क्षुद्र भावों को चित्त से हटा दें। हिन्दोस्तानी महारानी राजराजेश्वरी की एकमात्र प्रजा हैं, अन्य राज्य की प्रजा नहीं हैं। परस्पर उनसे समान बर्ताव होना चाहिए"। लार्ड महोदय एक विख्यात पुरुष, भारतवर्ष के शुभचिन्तक और इस देश की उन्नति चाहनेवाले हैं। उनके सदुपदेशों पर ध्यान देना उचित है और मिस्टर वागेल् के आदर्श का अनुकरण भारतवर्ष के युवा पुरुषों का परम धर्म होना चाहिए। ईश्वर परमात्मा इस महाराष्ट्र नवयुवक को इस कठिन शारीरिक और मानसिक कष्टों के उपरान्त प्राप्त किए हुए कार्य में सफलता प्रदान करे और हमारे देशवासियों को पुरुषार्थ दे कि वे व्यापारसम्बन्धी देशोन्नति में कटिबद्ध हों।

आप बीती हुई यह उनकी ज़ुबानी सुनिए।
मिस्टर वागेल् की ज़रा रामकहानी सुनिए॥

'इंग्लैण्ड आने से मेरा अभिप्राय यह था कि अंगरेज़ी दस्तकारियां तथा शीशे का काम सीखूं, क्योंकि मैंने भारतवर्ष में तथा इंग्लैण्ड में भी जब से मैं यहां आया हुआ हूं, इस विषय की बहुत कुछ छानबीन करके यह जान लिया था कि और सब अन्य प्रकार की दस्तकारियों में शीशे की दस्तकारी को अपने देश में प्रचलित करना अधिक लाभदायक होगा, क्योंकि इस प्रकार की दस्तकारी के सम्बन्ध में बहुत सी सामग्री और अन्य बातें अपने देश में अत्यन्त उपयुक्त अवस्था में वर्त्तमान् हैं। इस अभिप्राय से मैंने प्रथमतः यह उद्योग किया कि किसी शीशे के कारख़ाने में मैं कारीगरी सीखने को ऐप्रेण्टिस वृत्ति में भरती किया जाऊं और अपने इस उद्योग में सफलता प्राप्त करने के निमित्त मैंने अपनेको भारतवर्ष के अत्यन्त हितैषी, परिश्रमी, शुभचिन्तकों, सर जार्ज बर्डउड और स्वर्गवासी आनरेबुल मिस्टर नौरोज़जी विडपा प्रभृति ऐसे सज्जनों, सच्चे देशहितैषी सहायकों के आश्रित कर दिया। स्वर्गवासी मिस्टर नौरोज़जी विडपा उस समय अपने एजण्ट मिस्टर हारोटर ग्लासगो-निवासी द्वारा अनेक शीशे के कारख़ानेवालों से लिखा पढ़ी कर रहे थे। इसके उपरान्त एक होटल में एक सभा (कमेटी) एकत्रित की गई, जिसमें मिस्टर हारोटर ने कहा कि मैंने ३२ ऐसे कारख़ानों

से इस विषय में बातचीत की, किन्तु सिवाय यार्क-शायर के एक कारख़ाने के और समस्त कारख़ानों ने अपना मन्तव्य यह प्रकाश किया कि किसी अन्य देशी को अपने कारख़ाने में भर्त्ती करने से इन पर बहुत से विषयों में आपत्ति बढ़ जायगी। यार्कशायर के कारख़ाने ने जो कृपा की वह इस नियम के साथ कि २०० पाउण्ड (अर्थात् ३००० रु०) मैं वार्षिक फ़ीस देता रहूं और कारख़ाने के कई विभागों में से केवल एक विभाग (डिपार्टमेण्ट) का काम सीखूं, तब तो मैं कारख़ाने में भरती हो सकता हूं। इस कारख़ाने के नियम में विशेषतः वार्षिक फ़ीस का रुपया पूरा करना मेरी सामर्थ्य से बाहर था। किन्तु मुझसे इस विषय में उत्तर मांगा गया कि मैं निराश होकर भारतवर्ष को लैाट जाना वा इस नियम को पूरा करके काम सीखना चाहता हूं। इन दोनों में से मुझे क्या स्वीकृत है? जिस समय हमलोग भारतवर्ष से विलायत की ओर यात्रा करते हैं तो हम इस बात की प्रतिज्ञा कर लेते हैं कि धैर्य, परिश्रम, पुरुषार्थ और शुद्धचित्त से वहां काम करेंगे, किन्तु अपनी बीती अवस्था से मुझे विदित हुआ कि ये बातें यहां आनेवालों की पूरी सहायता नहीं करतीं, वरञ्च यहां आकर अत्यन्त प्रचण्ड कठिनाइयों से भी उसे सामना करना पड़ता है, और वे ऐसी हैं कि जो किसी प्रकार किसीके टाले नहीं टल सकती। अस्तु, मुझको उत्तर में हां वा नहीं कहना अत्यावश्यक था। उस समय मैं बड़ो कष्टदायक दुविधा में लवलीन और विचित्र अवस्था में था, क्योंकि यदि हां कहता हूं तो अपने में इतने वार्षिक द्रव्य प्रदान की सामर्थ्य नहीं पाता, और यदि नहीं कहता हूं तो माना अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त किए बिना घर लैाट जाने से मरजाना और अपने देश में मुंह न दिखाना ही उत्तम था। अतएव इस घबड़ाहट में मैंने फिर सर जार्ज महोदय से प्रार्थना की, क्योंकि मैं देख रहा था कि मेरी घबराई हुई अवस्था को देख कर आप भी स्वयं कुछ घबराए हुए थे। अन्त में आपने इस विषय में सहायक होकर मिस्टर हारोटर से यह इच्छा प्रगट की कि अन्तिम दो टूक उत्तर देने के लिये मुझे थोड़ा समय और सावकाश दें। मिस्टर हारोटर ने इस बात को स्वीकार कर लिया और सभा विसर्जित हुई और अब किसीको किञ्चित् भी शङ्का नहीं रही कि मेरे लिये दो बातें रह गई—अर्थात् मैं वार्षिक फ़ोस देना स्वीकार कर लूं या बम्बई लैाट जाऊं। अब मेरी उस दुरवस्था और नैराश्य को भली भांति समझ आप अनुमान कर सकते हैं। विशेषतः ऐसी अवस्था में कि मैं उस देश में एक परदेशो था।"

इसके उपरान्त सर जार्ज वर्डउड ने मिस्टर वागेल् को अपने एक मित्र से मिलाया और आपके मित्र ने वागेल् को एक बड़े कारख़ाने में भेजा।

पहिली बार कारख़ाने में जाना

"अस्तु मैं इस कारख़ाने के स्वामो के पास गया और मैंने इस बात पर विवाद किया कि उनके कारख़ाने में मेरा भरती होना सम्भव है। किन्तु उनके साथ वार्त्तालाप करने पर मुझे विदित होगया कि कारीगरों के चित्त में द्वेष और डाह भरी हुई है और उनके चित्त में इस बात का भी भय समाया हुआ है कि कदाचित् कारख़ाने में मेरे भरती होने से उनके व्यापार को किसी न किसी प्रकार विशेष हानि पहुंचे। इस विषय में मैंने कारख़ाने के स्वामी को भली प्रकार विश्वास दिलाया कि वर्त्तमान अवस्था और दशा के अनुसार उनका यह विचार व्यर्थ है। इस बात के प्रमाणित करने के लिये मैंने ब्ल्यूबुक की वे समस्त पुस्तकें मोल लीं जिनमें हमारे देश के व्यापार के नक़शे वर्त्तमान थे और मैंने उनको दिखलाया कि शीशे के व्यापार में इस समय आस्ट्रेलिया का नम्बर सबसे बढ़ा चढ़ा है, और विशेषतः जिस प्रकार के शीशे का काम मैं सीखना चाहता हूं, वैसा समस्त माल पूर्णतया आस्ट्रिया, बेलजियम, जर्मनी से भारतवर्ष में आता

है, ग्रैार इंगलिस्तान से थोड़ीसी वस्तु उस प्रकार की भारतवर्ष में जाती हैं, ग्रैार वह भी उत्तम श्रेणी की ऐसी वस्तु हैं जो ग्रन्य देशों में तैयार हो सकती हैं। जैसे सायन्सविद्या सम्बन्धी यन्त्र इत्यादि, जिनके विषय में ग्राज कल यह ग्राशा की जाती है कि वे भारतवर्ष में तैयार होने लगेंगे। ग्रतएव मेरा इन बातों की ग्रोर ध्यान दिलाना इतना काम कर गया कि कारख़ाने के स्वामी ने ग्रपने यहां मुझको भरती करने का संकल्प कर लिया ग्रैार शेष बातें भी बिना किसी रुकावट के सब तै हो गईं। जैसा कि हम भारतवासी हिन्दोस्तानियों में चन्द्रवार किसी नए काम करने में शुभ समझा जाता है, इसी प्रकार, मैं भी काम सीखने की इच्छा से सोमवार को कारख़ाने में गया ग्रैार भट्टी के पास ग्रनुमान ग्राध घण्टे तक रहा होऊंगा कि मुझे विदित हुग्रा कि ३० कारीगरों ने काम बन्द कर दिया ग्रैार कारख़ाने के स्वामी को डराने धमकाने लगे कि सब कारीगर काम बन्द कर देंगे। कारख़ाने के स्वामी बिचारे बड़ी कठिनाई में पड़े ग्रैार मेरा भी मन तब यह नहीं था कि मेरे कारण उनको हानि पहुंचे। मैं ऐसी दशा देख कर ग्रत्यन्त उदास हुग्रा ग्रैार झट कारीगरों के चैाधरी (फोरमैन) के पास ग्राया ग्रैार मैंने उनसे कहा कि मुझको यह दशा देख कर बड़ा खेद ग्रैार दुःख है कि मेरे कारण यह ग्रापत्ति कारख़ाने में उत्पन्न हुई। मेरी कभी यह इच्छा नहीं है कि मैं ग्रापको वा ग्रापके व्यापार को किसी प्रकार भी हानि पहुंचने दूं। इस कारण ग्रापको उचित है कि मेरी ग्रवस्था पर दया करके मुझको इस कारख़ाने में मित्रवत् समझें। मेरी बातों पर कारीगरों के चैाधरी ने यह उत्तर दिया—हे प्रियवर, तुम इतने उदास ग्रैार भयभीत मत हो; हम तुम्हारे कारण काम बन्द नहीं किए देते हैं। वरञ्च हम ऐसी ही घृणा से दूसरों के साथ बर्त्तते हैं। फोरमैन ने इसके उपरान्त मुझको समझाया कि यदि मेरी जगह कोई ग्रंग्रेज़ भद्र पुरुष होता तब भी वह यही बर्ताव करता। महाशयो, यह दूसरी बात थी कि मेरी सम्पूर्ण ग्राशाग्रों पर ग्रोस पड़ गई ग्रैार कारख़ाने के स्वामी के इस उत्तर से कि वह ग्रपने कारीगरों का स्वयं सेवक हो रहा है, मैं विपत्तियों में डूब गया। इसके उपरान्त जहां तक मैंने सुना ग्रैार ग्रपनी ग्राँखों से देखा, मुझे किञ्चित् मात्र भी इस बात की ग्राशा न रही कि मैं किसी कारख़ाने में भरती हो सकूंगा ग्रैार फिर मुझपर नैराश्य की घन घोर घटा छागई"।

मिस्टर वागेल ने इसके उपरान्त पोस्ट ग्राफ़िस डाइरेक्टरी से समस्त शीशे के कारख़ाने ग्रैार उनके स्वामियों के नाम ग्रैार पते कापी करके ३–४ कारख़ानेवालों से प्रतिदिन मिलना प्रारम्भ किया। शनैः शनैः उनसे मिलने पर ग्रापको यह ग्रनुमान हुग्रा कि इन सब कारख़ानेवालों में केवल दो से कार्यसिद्धि वा सफलता की ग्राशा दृष्टिगोचर होती है ग्रैार ग्रब उनको यह भी विदित हो गया कि यदि किसी कारख़ाने में उनका भरती होना सम्भव हो सकता है तो केवल कारीगरों के द्वारा। ग्रैार इसी ग्रभिप्राय से मिस्टर वागेल ने कारीगरों से मेल जोल बढ़ाना प्रारम्भ किया।

ग्रंग्रेज़ी दस्तकारों वा कारीगरों की ग्रवस्था

"कई कारख़ानेवालों ने तो मेरी प्रार्थना पर ध्यान देना ही ग्रनुचित समझा। कारख़ानेवालों में से कई एक ने कहा कि यह कार्य भयानक है। किसीने उत्तर दिया कि इस समय तक कोई हिन्दुस्तानी भरती नहीं हुग्रा है। कितनों ने मेरे विचार से बड़ा विरोध किया ग्रैार कितनों ने तो मुझे वह वह उत्तर प्रदान किए कि उन्हें केवल मेरा मन ही भली प्रकार जानता है। केवल दो कारख़ानों में मेरे साथ ग्रच्छा बर्ताव हुग्रा। एक कारीगर से मैं पैान घण्टे तक बात चीत करता रहा। तदनन्तर मैंने ग्रपना ग्रभिप्राय प्रकाशित किया कि मैं भी तुम्हारे साथ कारख़ाने में जाकर काम करना चाहता हूं। कारीगर ने यों उत्तर दिया 'तुम मेरे साथ चलना चाहते हो? क्यों है न यही बात? ग्रैार

तुम्हें मेरे साथ कहां न चलना भावेगा ? क्या तुम मेरे साथ स्वर्ग में चलना पसन्द न करोगे ?' ग्रैार यही प्रश्न वह बारबार मुझसे करता रहा। निदान मैंने उत्तर दिया निःसन्देह मैं तुम्हारे साथ चलने को प्रस्तुत हूं यदि तुम सिवाय वहां के दूसरी जगह न ले चलो। इसके उपरान्त मैंने इससे अब फिर न मिलने का चित्त में सङ्कल्प किया ग्रैार इसी प्रकार एक दूसरे कारीगर से अपना मन्तव्य प्रगट किया। किन्तु इन महानुभाव को मेरी बातें सुनके ऐसा क्रोध आया ग्रैार ये ऐसा बिगड़े कि मानो पाते तो कच्चा ही खा जाते। उन्होंने कहा 'ग्रोः, यह काले विदेशी तो आज कल ऐसे बहुत से हमारे देश में पाए जाते हैं'। आप यदि इतनाही कहते तो भी बहुत था, किन्तु आपने तो इसके उपरान्त जो कुछ आपके मुँह में आया बकना आरम्भ किया। ऐसी अवस्था में मैं क्या उत्तर दे सकता था ग्रैार चुप साधने के अतिरिक्त ग्रैार क्या उपाय था। अपनी ऐसी अधोगत अवस्था को देख कर एक एक दिन पहाड़ होता जाता था ग्रैार जो किञ्चित्मात्र आशा की झलक भी दिखाई पड़ती थी वह भी एकदम से नैराश्य के अन्धकार में लुप्त होती देखी। अब मुझको विश्वास हो गया था कि इस विषय में किसी प्रकार सफलता नहीं हो सकती। मेरा साहस, मेरा धैर्य्य, मेरी योग्यता, सब मुझसे विदा होने लगे। ग्रैार अब मेरी सम्पूर्ण आशा नैराश्य से ऐसी लिप्त हो रही थी कि मैं इस विचार में पड़ गया कि मुझे ईश्वर ने व्यर्थ ही उत्पन्न किया। कदाचित् यह पहिली ही बार ऐसा हुआ था कि मेरे चित्त में ऐसे विचार ने दृढ़ता से जमना आरम्भ किया। इसी प्रकार कोई बारह कारख़ानेवालों से मिला ग्रैार परिणाम में वही नैराश्य के अतिरिक्त कुछ न पाया। किन्तु इन सब बातों ग्रैार आपत्तियों के होते भी इन कारख़ानेवालों ग्रैार कारीगरों से मिलने पर कुछ न कुछ लाभ अवश्य प्राप्त हुआ। यद्यपि हर जगह से हताश हो हो कर लैाटता था, तथापि कुछ ऐसी अपूर्व शिक्षा प्राप्त होती थी जो मुझे विशेष लाभ पहुंचा सकी। वह शिक्षा यह थी कि मुझे विदित होगया कि यह कारीगर किन बातों को पसन्द करते हैं, ग्रैार कैान कैान सी बातें इन को रुचिकर ग्रैार अरोचक हैं, ग्रैार किस प्रकार इन लोगों तक पहुंच हो सकती है, ग्रैार किस चाल से इनको अपना मित्र बनाना चाहिए ग्रैार किस प्रकार इनसे सहानुभूति प्राप्त करनी चाहिए। एक विचित्र ग्रैार बड़ी भारी बात मुझे इधर उधर की दैाड़ धूप में देख पड़ी कि यहां के कारीगरों ग्रैार भद्रपुरुषों अर्थात् जेण्टिलमेन में बड़ा विरोध ग्रैार खटपट वर्त्तमान है"। मिस्टर वागेल ने जेण्टिलमेन की पोशाक वस्त्र इत्यादि का पहिरना त्यागके ऐसे फ़ैशन के वस्त्र धारण किए कि अब उन्हें देख एक अंगरेज़ कारीगर का धोखा होता था।

ब्लैकफ़्रेयर का "शीशे का कारख़ाना"

"निदान ईश्वर की कृपा से समय सानुकूल हुआ। एक दिन फिरते फिरते ३ बजे के लगभग एक ग्रोर जा रहा था कि समर स्ट्रीट में एक छोटा सा शीशे का कारख़ाना मैंने देखा। साइनबोर्ड पर मैंने आंख उठा कर देखा तो यह नाम लिखा था 'ब्लैक फ़्रेयर का शीशे का कारखाना' मैं झट पट कारख़ाने के अन्दर पहुंचा तो देखा कि बहुत से कारीगर अपने अपने काम में तत्पर हैं, किन्तु किसी ने भी मेरी ग्रोर न ताका। मैंने पूछा कि मैनेजर साहब कहां हैं ? तो विदित हुआ कि वे कहीं गए हुए हैं, यदि कुछ काम हो तो उनके स्थान पर मैनेजर साहेब की लड़की उपस्थित है। जब मुझसे यह प्रश्न हुआ कि आप किस अभिप्राय से पधारे हैं तब मैं बड़े चक्कर में पड़ा ग्रैार चकित सा था कि मैं इस लड़की से क्योंकर अपना मन्तव्य प्रकाशित करूं। ग्रैार ऐसी दुविधा की दशा में व्यथित होकर मैंने कहा कि मुझको एक दरजन बोतलें एक विशेष चाल की बनवानी अभीष्ट हैं। इसका प्रत्युत्तर मुझे यह मिला कि 'कल किसी समय आप पधारें तो मैनेजर साहब से भेंट हो सकती है'। किन्तु मैं तुरत

वहां से लैाट नहीं आया, वरञ्च अवसर पाकर इधर उधर थोड़ी देर तक टहलता रहा, जिसमें कारीगर लोग भली भांति मेरे स्वरूप से परिचित हो जावें। दूसरे दिन मैं फिर इस कारख़ाने में आया और मेनेजर साहब से भेंट भई। फिर एक दरजन बोतलें के लिये आज्ञा दी और दाम अगाऊ देने के लिये मैंने बड़ा हठ किया। यद्यपि मैंने दाम नहीं दिए पर मेरे अगाऊ दाम देने के हठ से मैंनेजर साहब ने बड़े कृपापूर्वक मुझसेबर्त्ताव किया और इस कारण मुझे फिर अवसर मिला और मैंने इनसे कारख़ाने की देख भाल और सैर करने की आज्ञा चाही। मैनेजर ने मेरे इस निवेदन को स्वीकार किया और ३ घण्टे के लगभग मैं कारख़ाने की देखभाल और सैर करता रहा। इस सैर में कुछ देर तक मैं कारीगरें के काम को देखा किया और कुछ देर तक इनको यह जताता रहा कि मैं हिन्दुस्थानी हूं। इतने ही में मुझसे यह प्रश्न होने आरम्भ हो गए कि क्या तुम्हारे ऐसेही भारतवर्ष में सब मनुष्य हैं ? वह क्या क्या करते हैं ? वह क्या खाते हैं ? वह भी हमारे ऐसे घरें में रहा करते हैं ? तुम्हारे यहां कोई रेल है ? तुम जानते हो रेल क्या वस्तु है ? जहां तक मुझसे सम्भव था मैं इन प्रश्नों का पूरा पूरा उत्तर देता रहा और इसके अतिरिक्त मैंने इनकी जिज्ञासा बढ़ाने को शेर, सांप, हाथी आदि की चर्चा छेड़ दी। अतएव इस दिन अत्यन्त प्रसन्नता और आनन्दपूर्वक इन लोगों से बिदा होकर दूसरे दिन फिर जाने की आशा में मैं लैाट आया।"

मिस्टर वागेल दूसरे दिन इस कारख़ाने में ऐसे समय पर पहुंचे कि दिन भर के काम करनेवाले कारीगर अपने घरें को जा रहे थे और रात के काम करनेवाले कारीगर अब अपना काम आरम्भ कर रहे थे। शीशे के कारख़ानें में रात दिन लगातार काम होता रहता है, जिसमें लकड़ी और कोयला, जो भट्टियें में जला करता हैं, वृथा नष्ट न हो।

"इस बेर मैंनेजर ने मेरा बड़े आदरपूर्वक स्वागत किया और मैं भी प्रत्येक कारीगर से भली भांति गप शप करता रहा। मुझको यहां अपना समय व्यतीत करने में यह लाभ दिखाई दिया कि कारीगर लोग मुझसे बात चीत करने के बड़े जिज्ञासु थे और ऐसी कृपा और मेल जोल देखके मुझको अपना वास्तविक मन्तव्य प्रगट करने का साहस सा होने लगा। निदान मैंने कारख़ाने के स्वामी मिस्टर सी से पूछा कि यदि एक यथोचित् द्रव्य फ़ीस मैं आपकी भेंट करूं तो क्या आप मुझको ऐप्रेण्टस समझ कर काम सिखाने के लिये इस कारख़ाने में भरती करेंगे ? मैंने मिस्टर सी को यह भी समझा दिया कि उनके व्यापार में कदापि किसी प्रकार का अवरोधक मैं न होऊँगा। और उनके स्वत्व की रक्षा के लिये अपने को कानून के नियमानुसार प्रतिबद्ध करने को मैं सब प्रकार से प्रस्तुत हूं। मिस्टर सी ने बड़े हठ के साथ यह उत्तर दिया कि 'नहीं, नहीं, साहब, मैं यह नहीं कर सकता हूं"। मैंने भी अपनी बात पर बहुत ही हट किया, किन्तु मिस्टर सी बारम्बार यही कहते रहे कि "कदापि नहीं। ऐसा होना असम्भव है"। तब मैं चुप हो रहा। आपकी महती कन्या इस कारख़ाने के दफ़्तर का सम्पूर्ण कार्य्य आपही करती हैं। मैंने उनसे सब हाल कह सुनाया। और मेरे जी में यह कल्पना हो रही थी कि यहां आने का सिलसिला भी टूटा चाहता है। किन्तु मिस सी ने बातें बातें में अपनी सम्मति यें प्रकाशित की कि थोड़े दिनें के अनन्तर कारख़ाने के स्वामी से प्रार्थना करना"।

मिस साहबा के इस अनुरोध से मिस्टर वागेल को इस विषय में फिर साहस हुआ और आप प्रति दूसरे दिन इस कारख़ाने में बराबर आते रहे और क्रमशः यहां के प्रत्येक मनुष्य से आपकी गहरी मित्रता हो गई।

"एक दिन सन्ध्या को मैंने मिस्टर सी से कहा कि मेरे साथ कृपा करके थियेटर चलिए। आपने

मेरी बात मान ली। आपको थियेटर ले जाना मेरे लिये अत्यन्त भाग्योदय और सफलता का कारण हुआ। आप अपनी जीवित अवस्था में कदाचित् दो चार ही बेर थियेटर गए थे। मैंने आपसे यह बात पक्की कर ली कि सन्ध्या के सात बजे थियेटर में मिलूंगा। हमलोग ठीक समय पर थियेटर में मिले। मेरा विचार हुआ कि मैं बड़े दर्जे का टिकट लूं, किन्तु मिस्टर सी ने कहा कि अधिक रुपया व्यय करना वृथा है। अस्तु हमलोगों ने एक छोटे दर्ज़े के टिकट ले लिए। अभिनय समाप्त होने पर हम दोनों एक एक बोतल लेमोनेड पी कारखाने की ओर चल पड़े। दिन भर तो कुहिरा और ठण्ढक अधिक रही, किन्तु जब हम थियेटर से बाहर आए तो देखा कि आकाश विमल और चाँदनी भली भांति छिटकी हुई है। इस कारण गाड़ी पर सवार न होकर हमने पैदल घर चलना उचित समझा। साढ़े ग्यारह बजे हम ब्लैकफ़ेयर नामक पुल पर पहुंचे। उस समय का कुछ विचित्र ही दृश्य था। नदी का जल स्वच्छ और विमल चाँदनी से चमकता हुआ अपने प्रवाह में मग्न था। चन्द्रमा ने अपने तेजोमय प्रकाश से सम्पूर्ण बड़े बड़े ऊँचे ऊँचे मकानों को रुपहला वस्त्र धारण कराके विचित्र ही रीति से सुशोभित किया था। इस सुहावने दृश्य को देखकर चित्त कैसा प्रफुल्लित था कि मैंने उसी क्षण यह विचार किया कि अब एक बेर और अपना मन्तव्य अन्तिम उद्योग के साथ प्रकाशित करके अपनी प्रारब्ध का फल देखूं। अतएव मुझसे रहा नहीं गया और मैंने मिस्टर सी से अपनी लालसा इस बेर दूसरे रूप से वर्णन करनी आरम्भ की। मैंने उनसे कहा कि मेरे एक मित्र शीशे का काम सीखने के अभिप्राय से इस देश में आ रहे हैं और वह मेरे बड़े गाढ़े मित्र हैं; अतः मेरी प्रार्थना है कि आपको उचित है कि आप कृपा करके अपने कारखाने में उनको काम सिखाइए। मिस्टर सी ने कहा कि 'तुम जानते हो कि यह अत्यन्त कठिन काम है और इसमें बड़ा भय है, मैं उनको अपने कारखाने में भरती नहीं कर सकता'। तब फिर मैंने कहा कि वह आदमी बहुत अच्छा है और मुझे निश्चय है कि आप उससे बहुत ही प्रसन्न रहेंगे। (मिस्टर सी) मैं तुमसे निश्चय करके कहता हूं कि मैं उनके लिये कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि मैं उनको नहीं जानता; मुझको तुम्हारे भरती करने में कोई विरोध नहीं है, किन्तु उनको मैं कदापि भरती नहीं कर सकता। (मैं) क्या आप मुझको काम सिखावेंगे? (मिस्टर सी) इसमें मुझको कोई आपत्ति नहीं है! (मैं) तो क्या मैं यह समझूं कि आप मुझको काम सिखाने की प्रतिज्ञा करते हैं?। (मिस्टर सी) हां, हां, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। उस समय मुझको जो आनन्दमय प्रसन्नता प्राप्त हुई उसको मैं किसी प्रकार से भी प्रकट नहीं कर सकता। मैं फूला नहीं समाता था और अब मिस्टर सी की इस बात से मेरे शरीर में मानो फिर से प्राण आ गए"। अतएव सब बातें बहुत ही शीघ्र स्थिर होकर मिस्टर बागेल ने शिष्य की भांति काम सीखना प्रारम्भ किया। यह तो अवश्य हुआ कि नई नई कठिनाइयाँ सामने आईं और कई प्रकार की रुकावटें उपस्थित हुईं। किन्तु मिस्टर सी ने इस अवसर पर बड़ा प्रशंसनीय काम किया और बड़े धैर्य और दृढ़ता से अपने बचन का पालन करके सम्पूर्ण कठिनाइयों का सामना किया।

ट्रेड युनियन का विरोध

"तीन वा चार दिन मैंने इस कारखाने में काम किया होगा कि मिस्टर सी के पास ट्रेड यूनियन वालों का एक निम्नलिखित पत्र आया—'हमको विदित हुआ है कि तुम्हारे कारखाने में एक अन्यदेशीय काला आदमी काम सीखता है। अस्तु इस विषय में तुम सभा के सन्मुख क्या उत्तर उपस्थित करते हो'। मिस्टर सी ने मुझको यह पत्र दिखाकर यों पत्रोत्तर दिया कि 'निःसन्देह एक अन्यदेशीय हमारे कारखाने में काम सीखता है, किन्तु पूर्व इसके कि वह इस कारखाने में भरती किया गया, उसने मुझको इस विषय में पूर्ण निश्चय

करा दिया है कि ट्रेडयूनियन जिन सत्वों का रक्षक है उनको इससे कोई हानि न पहुंचेगी'।

"दस दिन के अनन्तर इस सभा ने फिर यों पत्र लिख कर भेजा कि तुम इस अन्य देशी को अपने कारख़ाने से निकाल दो, नहीं तो यह सभा तुम्हारे कारीगरों को काम बन्द कर देने की आज्ञा और परामर्श देगी'। यह दशा देख कर मुझको निश्चय हो गया कि फिर जमा जमाया रङ्ग बिगड़ा चाहता है। मैं अत्यन्त निराश होकर मिस्टर सी के पास गया और मैंने अत्यन्त शोक के साथ उनसे कहा कि आपने तो निःसन्देह मुझे कृतार्थ किया था, किन्तु मेरा दुर्भाग्य है। अब आप मेरे पीछे अपने कारबार अथवा व्यापार को हानि न पहुंचावें, और मैंने दृढ़ संकल्प कर लिया है कि अब मैं अपने देश को लौट जाऊंगा। मिस्टर सी ने कहा 'ओल्ड चैप! तुम क्यों इतना व्याकुल होते हो? मुझको उचित है कि मैं अपनी प्रतिज्ञा पालन करूं और मैं दृढ़ता से अपनी बात पर स्थिर रहूंगा'। आपने इसके अनन्तर ट्रेड यूनियन को लिखा 'मैंने इस पुरुष को अपने कारख़ाने में भरती करने पर व्यापार सम्बन्धी संपूर्ण स्वत्वों की पूर्णतया रक्षा करली है और मैंने इसको काम सिखाने का वाक्य प्रदान किया है। कोई कारण नहीं जाना जाता कि आपलोग इस विषय में क्यों विघ्न डालने की चेष्टा करते हैं। यदि आपका विरोध अब भी शेष रह गया हो तो आपको अधिकार है, जो मन में आवे कीजिए, किन्तु मैं कदापि अपनी प्रतिज्ञा भङ्ग न करूंगा'। इस उत्तर को पाकर ट्रेड यूनियन ने फिर चूं तक न की। ईश्वर ईश्वर करके अब मैंने इस कारख़ाने में अपना पैर जमाया, किन्तु अभी बहुत से कष्ट और दुःख झेलने शेष रह गए थे। प्रथम प्रथम तो मिस्टर सी ने एक नली, एक कैंची और एक चिमटा दे कर काम सिखाना आरम्भ किया। इस बात को तो कोई अस्वीकार नहीं कर सकता कि मेरे लिये यह सर्वथा नया काम था और मानो नई विपत्ति का सामना था। क्योंकि थोड़े दिन पूर्व मेरी यह दशा थी कि कठिनता से एक बण्डल बांध सकता था। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कार्य ऐसा कठिन और दुखदाई था कि मैं ही उसे भली भांति जान सकता हूं। दिन रात भट्ठा आंच से दहकता ही रहता और इससे एक गज़ के अन्तर पर मुझको काम करना पड़ता था। मैं शब्दों के द्वारा कदापि नहीं बता सकता कि कैसी प्रचण्ड और दाहक आंच की लपट आती थी। उसका ज्ञान देखते और भोगने ही पर निर्भर है। कितनी बेर ऐसा संयोग हुआ कि काम करते करते मैं मूर्छित हो हो गया। प्रायः अधिक से अधिक तीन वा चार घण्टे प्रतिदिन काम करता था, क्योंकि मुझसे अधिक समय तक काम करना असम्भव था और घर पर पहुंचकर मैं मुर्दे के समान पड़ रहता था। प्रायः इतने श्रम से रोगग्रस्त भी हो हो गया और कभी कभी महादुखित होके यह विचारता था कि वृथा अपनी जान गँवाने के पीछे पड़ा हूं। किन्तु इन शारीरक और मानसिक कष्टों के अतिरिक्त और नई विपत्ति का सामना हुआ। इस विपत्ति को किसी अंग्रेज़ के सामने वर्णन करना मानो अपने को अति मूढ़ और महा पागल प्रमाणित करना है, किन्तु यदि हम हिन्दुस्तानियों के जी से पूछिए तो वह निःसन्देह एक भारी विपत्ति है। जैसे पहिले दिन जब मिस्टर सी ने मुझको काम बताना आरम्भ किया तो आपने मुझको दिखाया कि क्योंकर बरतन बनाए जाते हैं। आपने नली के एक सिरे से गले हुए शीशे को हिला कर दूसरे सिरे को डेढ़ इंच तक मुँह में लेकर फूंकना प्रारम्भ किया और इसके अनन्तर मुझसे कहा कि देखो, इसी प्रकार फूंको, अपने मुंह से नली निकाल कर मुझसे कहा लो फूंको, किन्तु एकाएकी इस आज्ञा का पालन करना उस समय तो मानो मुझसे असम्भव था। हिन्दुओं के विचारानुसार उच्च कुल अर्थात् महाराष्ट्र ब्राह्मण के लिये किसी जूठी वस्तु को मुँह में लेना कैसी घोर विपत्ति का काम था। अस्तु, मैं पत्थर सरीखा बुत हो गया और मिस्टर

सी की ग्रोर एकटक निहारता रहा ग्रैार मेरा चित्त इस कार्य के लिये नहीं बढ़ा, तथा मैं हिचकिचाहट ग्रैार दुब्धा में था कि वहां शीशा ठंढा हो गया। मिस्टर सी बड़े बिगड़े कि शीशा ठंढा हो गया ग्रैार मैं मुंह ताकता ही रह गया। ग्रापने क्रोधित होकर यह कहा 'महाशय, स्मरण रखिए कि मुंह से फूंकना चाहिए न कि ग्रांखों से'। वह विचारे क्या जानें कि मैं किस छक्के पञ्जे में पड़ा था ग्रैार कैसा क्लेश मेरे चित्त को उस समय था। मुझे ग्रपना वह समय स्मरण था कि जब बाल्यावस्था में मैं ग्रपने भाई बहिन की बजाई हुई बांसुरी को भी स्वयं नहीं बजा सकता था। कहां तो हमारा बालपन से यह ग्रभ्यास पड़ा हुग्रा है कि यदि कोई प्रिय से प्रिय निकट सम्बन्धी भी एक गिलास में पानी पी ले तो झट हम उसमें पानी नहीं पी सकते, ग्रैार कहां एक ग्रंग्रेज़ की जूठी नली मुंह में लेनी! निदान कुछ दिनों तक तो पहिले पहल बड़ी कठिनाई उपस्थित रही, किन्तु ग्रन्त में किसी न किसी प्रकार यह भी टल गई।"

यदि मिस्टर बागेल की जगह कोई उच्च श्रेणी का ग्रंग्रेज़ होता तो वह इन बातों को ग्रत्यन्त तुच्छ समझता ग्रैार तनिक भी ग्रागा पीछा ग्रैार घृणा न करता ग्रैार न उसको ग्रपनी धर्महानि का कुछ दुःख होता। भाग्यवश मिस्टर बागेल ने नली मुंह में लेकर ग्रपने साथी कारीगरों के सामने विना ग्रागा पिछा किए काम करना ग्रारम्भ कर दिया।

मिस्टर बागेल के चाचा परलोक सिधारे

"इस बीच में एक ग्रैार महा घोर विपत्ति मुझपर ग्रकस्मात् ग्रा पड़ी। बम्बई में मेरे चाचा का देहान्त हो गया। ग्राप ही ग्रब मेरे पिता के स्थान पर थे ग्रैार ग्राप ही ने पालन पोषण करके मुझे इस योग्य किया था। ग्रापही की कृपा से मैं इतनी शिक्षा प्राप्त कर सका ग्रैार मेरी यह ग्रान्तरिक इच्छा थी कि मैं इस विशेष कृपा का धन्यवाद दूं ग्रैार ग्रपनी कृतज्ञता इस प्रकार उनकी सेवा में ग्रर्पण करूं कि ग्रापने जो कुछ द्रव्य मेरे पठन पाठन ग्रैार शिक्षा सम्बन्ध में व्यय किया ग्रैार जो जो क्लेश मेरे कारण सहे, वह सब कदापि वृथा नहीं गया। कारख़ाने को ग्राते हुए मार्ग में मिस्टर सी से भेंट हुई। मैंने उनसे यह महा शोकदायक समाचार कहा। मुझको ग्राशा थी कि इस शोकसम्वाद को सुनकर ग्रवश्यमेव मिस्टर सी मेरे साथ ग्रपनी सहानुभूति प्रकाश करेंगे। किन्तु यह समाचार सुनके मिस्टर सी का प्रथम प्रश्न मुझसे यह था कि 'तुमको कुछ द्रव्य दे गए हैं?' मेरे विचार में कदापि यह बात न थी कि जो कोई इस समाचार को सुनेगा वह क्या इस ग्रोर तनिक भी ध्यान न देगा। ग्रैार इससे विशेष यह कि ग्रापने झट ग्राज्ञा दी कि 'बोतलें झट पट तैयार करो, ग्राज सन्ध्या को भेजी जायँगी'। इस ग्राज्ञा को पाकर मैंने काम तो ग्रारम्भ किया, परन्तु वास्तव में मैं समय काट रहा था ग्रैार मेरा चित्त ग्रत्यन्त व्याकुल ग्रैार व्यथित था। इसके ग्रनन्तर मिस्टर सी की मानवती कन्या वहां पधारीं ग्रैार ग्रापने ग्रातेही कहा कि मुझे ग्रत्यन्त दुःख है कि ग्रपने चाचा की मृत्यु से ग्रापको बड़ा शोक हुग्रा। मैंने पूछा ग्रापको कैसे विदित हुग्रा कि मुझे ग्रत्यन्त शोक हुग्रा है? मिस सी ने कहा मेरे पिता ने मुझसे कहा कि ग्रापके बदले ग्राज तीसरे पहर मैं बैङ्क चली जाऊं, क्योंकि ग्राप बड़े उदास थे। ग्रस्तु उनका विचार यह था कि ग्रापको ग्रापने साथ कर्लाप टाउन ले जायँगे क्योंकि वहां कुछ पुराना शीशा देखना है। इसके ग्रनन्तर मुझको विदित हुग्रा कि मिस्टर सी को मेरे साथ विशेष सहानुभूति है। एक दिन मैं ग्रपने चाचा की मृत्यु की चर्चा कर रहा था ग्रैार उनको बता रहा था कि ग्रब क्या क्या कष्ट सहन करने पड़ेंगे, कि मिस्टर सी ने कहा 'तुम घबराग्रो मत, जब तक मैं जीता हूं इस व्यापार में तुमको कोई कठिनाई न पड़ेगी।' ग्रस्तु धीरे धीरे

कारीगरों और मिस्टर सी के साथ मेरे संबन्ध प्रतिदिन दृढ़ होते गए, और अन्त के मिस्टर सी ने तीन सप्ताह की छुट्टी ली और वे कारखाना मुझे सौंप गए। छुट्टी से लौट कर आपको मेरी कार्रवाई देखकर बड़ा सन्तोष हुआ और आपने अपने इस भाव को यों प्रकाशित किया कि मुंह-ज़ुबानी प्रशंसा इत्यादि करके वार्षिक फ़ीस में कुछ कमी कर दी। अब यह अवस्था है कि यदि थोड़ा सा काम भी नई चाल का कारखाने में तैयार होता है तो सदैव मुझको अपने साथ ले जाकर दिखाते हैं। और यदि मैं आज उनसे कहूं कि इस काम के चलाने में मेरी सहायता करें तो मुझको पूरा भरोसा है कि जो कुछ उनके बस में होगा उससे वे नहीं हटेंगे। कारीगरों को अपना मित्र बनाने का केवल यही उपाय है कि जो काम वे कर रहे हैं वही आप भी करें; जो उनका वर्त्ताव है वह अपना वर्त्ताव रक्खें; जिस चाल की बात चीत उन्हें भाती है वैसीही बात चीत करें; जो वस्तु वह पहिरते हैं वैसी चाल की वस्तु स्वयं धारण करें।" अस्तु मिस्टर वागेल इस समाज (सोसाइटी) में भलीभांति मिल गए और इसी कारण वह आज कारखाने में सर्वप्रिय हो रहे हैं।

"अब तो यह नियम हो गया है कि जहां मैं कारखाने में आया कि चारो ओर से 'आइए महाशय आइए' की ध्वनि गूंज उठती है। और प्रत्येक कारीगर अपने भरसक इस बात के उद्योग में रहता है कि मुझको किसी प्रकार का कष्ट न हो। जहां मैं काम पर आया, एक झट कुरसी ले आता है, दूसरा नली उठा देता है और मैं अपना काम आरम्भ करता हूं। यदि किसी समय काम में कोई भूल अथवा चूक हो जाती है और किसीकी दृष्टि पड़ जाती है, तो वह झट कूद कर आता है औरमुझको बता देता है कि किस चाल से उसे करना चाहिए। इन लोगों की कृपा से न मेरा समय नष्ट होता है, न मुझको कुछ दुःख सहना पड़ता है। मैं शुद्धान्तः-करण से इस बात को स्वीकार करता हूं कि इस समय न तो इन लोगों ने इस काम के सम्बन्ध में कोई भेद मुझसे छिपा रक्खा है और न ऐसी इच्छा इन लोगों की है। प्रायः पालिटिक्स, फ़िलासोफ़ी, कबिता पर बिवाद और बातचीत हुआ करती है, किन्तु यह बात यहां दूसरे प्रकार से हुआ करती हैं। और मुझको विदित हुआ कि कई बेर ये लोग अड़ङ्ग बड़ङ्ग बका करते हैं, परन्तु सम्पूर्ण बिषयों पर भली भांति विबाद कर सकते हैं।

"यह बात अवश्य है कि इनसे ऐसी आशा नहीं हो सकती कि पार्लियामेण्ट के महामन्त्री के सदृश प्रत्येक विषय के सम्बन्ध में उसके प्रिंसिपिल पर बिबाद कर सकें, तौभी मैं कह सकता हूं कि प्रायः ऐसा होता है कि ऐसी गम्भीरता और पवित्रता-मय विचार, उदारप्रकृति और नीतिपरायणता उन लोगों की बातों में झलक जाती है कि जो पार्लियामेण्ट के बड़े बड़े मेम्बरों में भी नहीं देख पड़ती।"

यह मिस्टर वागेल की सिर बिती रामकहानी है। हमारे देशवासी इसे ध्यान से पढ़ें और देखें कि उनकी क्या अवस्था है। हा! क्या वह दिन आवेगा कि जब हमारे देशवासियों की आंखें खुलेंगी और वे अपना हित अनहित पहिचान सकेंगे।

राजराजेश्वरी महाराणी विक्टोरिया

इतिहास के प्रेमियों से यह बात छिपी नहीं है कि इङ्गलैण्ड की अवस्था का परिवर्तन नार्मन लोगों के उस देश में आकर बसने पर हुआ। बादशाह विलियम ने इस देश को जीत कर यहां अपना राज्य जमाया। महाराणी विक्टो-रिया उसी विलियम के बंश में हुई। ईश्वर की कुछ विचित्र लोला है कि संसार में कहीं तो वंशों का पूर्ण नाश हो जाता है और कहीं एक ही वंश सहस्रों वर्ष तक राज्य करता चला जाता है। इङ्गलैण्ड के राज्यसिंहासन पर अज तक

तीन स्त्रियों ने राज्य किया। पहिली महाराणी एलिज़बेथ, दूसरी महाराणी ऐन और तीसरी हमारी राजराजेश्वरी महाराणी विक्टोरिया। जिस समय महाराणी विक्टोरिया राज्यसिंहासनासीन हुईं उस समय साधारण प्रजा का प्रेम राजा की ओर से कम हो चला था।

महाराणी ने उस प्रेम की पुनः वृद्धि की और उससे अपने राज्य की स्थिरता की नेव डाली। यही नहीं, वरन् महाराणी ने अपने सरल स्वभाव, निष्कपट प्रेम और प्रजा के हितकर विचारों से वह कर दिखाया जिसे विचार और देख अब तक लोग अचम्भित होते हैं। एक समय किसी राज्य-विदूषक ने कहा था कि पुरुषों से तो स्त्रियों का ही राज्य विशेष हितकर है, क्योंकि पुरुषों के समय में स्त्रियों की अधिक प्राधान्यता हो जाती है, पर स्त्रियों के राज्यकाल में पुरुषों ही की प्राधान्यता रहती है और यही होना भी उचित है। महाराणी ने इस कथन को पूरा कर दिखाया और पूरा भी ऐसी रीति से किया कि जिसका कदाचित् विदूषक महाशय ने स्वप्न भी न देखा होगा। निज राज्य के बुद्धिमान लोगों की सम्मति से चलना उनका प्रधान नियम था। पर इस नियम के वशीभूत होकर काम करना बुद्धिमानी से किसी प्रकार न्यून नहीं है। स्त्री की देह पाने पर भी महाराणी ने अपना राज्यकाज उस उत्तमता, उस बुद्धिमत्ता और नीतिकुशलता से चलाया कि जिसकी प्रशंसा आज दिन योरप के बड़े बड़े मुकुटधारीगण मुक्तकण्ठ से कर रहे हैं। कभी आश्चर्य दिखाकर, कभी प्रश्न के आवरण में निज सम्मति देकर और कभी केवल मौन धारण करके महाराणी अपने मंत्रियों को शिक्षा देती और उनसे उचित रीति से कार्य लेती थीं। यदि हम महाराणी के राजत्वकाल की घटनाओं पर ध्यान करते हैं तो आश्चर्य्य से मुग्ध रह जाते हैं। विद्या में, विज्ञान में, कला में, कौशल में, राज्यवृद्धि में, शिक्षा प्रचार में, दीन दुखियों की सुध में—निदान प्रत्येक बात में हम इस राज्य की समता नहीं पाते। यह किसी बड़े प्रबल पुण्य का फल था कि महाराणी के समय में इतना कुछ हो गया। परन्तु अब वह शरीर वर्तमान नहीं है कि जिसकी हम इतनी प्रशंसा कर रहे हैं, जिसके यश को मुक्तकण्ठ से गा रहे हैं और जिसके गुनगान और चरित्र वर्णन में अपनेको धन्य मानते हैं। ईश्वर करे सुनीति का प्रचार रह कर राज्य की स्थिरता बनी रहे और महाराणी के अनुपम आदर्श पर चल कर अगले राजागण अमोघ यश के भागी हों।

जन्म और वंशपरम्परा

इङ्गलैण्ड के राज्यसिंहासन पर सन् १७६० ई० में तीसरा जार्ज बिराजा। इसको चार सन्तति हुईं, (१) चौथा जार्ज, (२) चौथा विलियम, (३) ड्यूक आफ़ केण्ट और (४) अरनेष्ट आगस्टस, किङ्ग आफ़ हानोवर। चौथे जार्ज ने सन् १८२० ई० तक राज्य किया। अन्तिम दिनों में तो वह पागल सा हो गया था, इसलिये इसकी जीवित अवस्था ही में उसका ज्येष्ठ पुत्र सब राजकाज करता था। पिता के परलोकबास होने पर वह गद्दी पर बैठा और १० वर्षों राज्य करता रहा। इसको सन् १७९६ में एक कन्या हुई, पर वह १८१७ में मर गई। अतएव जार्ज की मृत्यु पर उसका दूसरा भाई चौथा विलियम गद्दी पर बैठा। विलियम के कोई सन्तति नहीं हुई। तीसरा भाई केण्ट था। इनका विवाह कोबर्ग की राजकुमारी विक्टोरिया मेरियालु इसा से हुआ था। ये लोग अपनी हीन आर्थिक अवस्था के कारण फ़्रान्कोनिया में रहते थे। पर जब राजकुमारी लुइसा गर्भवती हुई तो केण्ट उन्हें इङ्गलैण्ड में ले आए कि जिसमें जो सन्तति उत्पन्न हो वह इङ्गलैण्डही में हो। निदान ता० २४ मई, सन् १८१९ ई०, को केन्सिंगटन राजभवन में एक पुत्री का जन्म हुआ। इस समय तक तीसरा जार्ज जीता था और उसके चार पुत्र वर्तमान थे; किसीको इस बात का ध्यान भी न हुआ कि इस कन्या के जन्म से कोई विचित्र घटना हुई, अथवा आगे चल कर वह इङ्गलैण्ड के

[४ वर्ष]

[१० वर्ष]

[१८ वर्ष]

[२२ वर्ष]

[४१ वर्ष]

[५६ वर्ष]

[७३ वर्ष]

राज्यसिंहासन पर विराजेगी। नामकरण के समय बड़ा झगड़ा पड़ा। पिता की इच्छा थी कि पुत्री का नाम एलीज़बेथ हो। रूस के ज़ार चाहते थे कि अलेकज़ेंड्रिना नाम पड़े। प्रिन्स रीजेन्ट, जो सन् १८२० में चौथे जार्ज के नाम से गद्दी पर बैठे, यह चाहते थे कि इसका नाम जार्जिना हो। निदान अन्त में २४ जून को सब लोगों की सम्मति से अलेकज़ेंड्रिना विक्टोरिया नाम रक्खा गया। विक्टोरिया के पिता की शारीरक अवस्था अच्छी नहीं थी। पुत्री के जन्म के एक वर्ष पीछे वे बीमार पड़े और चौथे जार्ज के गद्दी पर बैठने के ५ दिन पहिले परलोकगामी हो गए।

बाल अवस्था

महाराणी विक्टोरिया की माता का विवाह यद्यपि ड्यूक आफ़ केण्ट के साथ हुआ और यद्यपि उन्हें इङ्गलैण्ड में रहना पड़ा, पर वास्तव में उनका हृदय जर्मन था और उनकी इच्छा सदा जर्मनी में रहने की थी। इस पुत्री के हो जाने पर और उसकी भविष्यत उन्नति पर विचार करके भी उन्हें इङ्गलैण्ड में रहना नहीं भाता था। पर वे बुद्धिमान और दूरदर्शी स्त्रीरत्न थीं, अतएव अपनी इच्छा के प्रतिकूल उन्होंने इङ्गलैण्ड में ही रहना निश्चय किया। डचेस आफ़ केण्ट के भ्राता प्रिंस लिओपोल्ड थे, जो सदा इनकी सहायता करते और समय समय पर अपनी उचित सम्मति से बहुत से बिगड़े हुए कामों को भी सम्हाल लेते थे। इनका विवाह पहिले चौथे जार्ज की कन्या से हुआ था, परन्तु जब वह सन् १८१७ ई० में मर गई तो इनकी सब भविष्यत आशाओं का मूल नष्ट हो गया। इस पर ये संसार से उदासीन हो विरक्तभाव धारण कर किंकर्तव्यबिमूढ़ की भांति निरुद्देश्य देशाटन में अपना कालक्षेप करने लगे। जिस समय महाराणी विक्टोरिया का जन्म हुआ, उन दिनों ये स्काटलैण्ड में थे पर इङ्गलैण्ड न आए। पर ड्यूक आफ़ केण्ट की मृत्यू का समाचार सुना तो शीघ्र ही वहां चले आए और अपनी भांजी की रक्षा शिक्षा में दत्तचित्त हो अपना समय बिताने लगे। ये लोग कई मास पर्य्यन्त भिन्न भिन्न स्थानों की यात्रा किया करते। जब १८२० और १८२१ में ड्यूक आफ़ क्लारेन्स के दोनों पुत्र मर गए और यह स्पष्ट दिखाई देने लगा कि प्रिंसेस विक्टोरिया ही आगे चल कर राजसिंहासन पर विराजेंगी, तो उनकी माता को यह भय और आशङ्का होने लगी कि जार्ज इस बात का कहीं आग्रह न करे कि राजकुमारी की शिक्षा उसके आधीन और उस प्रकार से जैसा कि वह चाहे होनी चाहिए। डचेस को सदा से जार्ज के चालचलन पर पूर्ण घृणा थी और वह कदापि नहीं चाहती थी कि उसकी कन्या उससे अलग करके ऐसे हाथों में सौंपी जाय कि जिनसे भलाई होने की कोई आशा न थी। यही कारण था जो वह प्रायः भ्रमण किया करतीं। विक्टोरिया के मामा का यह विचार था कि जहां तक और जितने दिनों तक सम्भव हो, उन्हें यह बात न बताई जाय कि वह एक समय राजसिंहासन पर विराज सकती हैं, क्योंकि इससे उनमें अभिमान उत्पन्न हो सकता है और तब उनकी उपयुक्त शिक्षा असम्भव हो जायगी। अतएव १२ वर्ष की अवस्था तक यह बात छिपा रक्खी गई। महाराणी होने के पूर्व तक राजकुमारी सदा अपनी मां के साथ रहतीं और जब तक उनको माता अथवा मिस लेहजन (जिन्हें इनकी शिक्षा का भार सौंपा गया था) उपस्थित न होतीं, वे किसी मित्र, नौकर अथवा अन्य किसी पुरुष से कुछ बात न कर पाती थीं। जहां जहां वह जातीं मिस लेहजन साथ रहतीं, ये पुत्री से भी बढ़ कर राजकुमारी को मानतीं और अहर्निशि उन्हींके हित की चिन्तना करतीं, यहां तक कि राजकुमारी की ६ महीने की अवस्था से लेकर जब तक वह महाराणी न हुईं, मिस लेहजन ने उनका साथ न छोड़ा और कभी एक दिन तक की भी छुट्टी न मनाई। पहिले पहल राजकुमारी को जर्मन भाषा सिखाई गई, पर जब वे ९ वर्ष की हुईं तो लैटिन, अंग्रेज़ी, इतिहास, चित्र

तथा गानविद्या आदि की शिक्षा दी जाने लगी, जिन सभों में उन्होंने मन लगाया और अत्यन्त तीव्र-बुद्धि होने के कारण थोड़ेही दिनों में सबका मनन कर लिया।

जब चौथा विलियम गद्दी पर बैठा तो उसने राजकुमारी को अपना उत्तराधिकारी बनाया। अब यह उचित समझा गया कि राजकुमारी को यह बता दिया जाय कि भविष्यत में उन्हें क्या क्या करना होगा। एक दिन मिस लेहजन ने राजकुमारी जिस इतिहास की पुस्तक को पढ़ती थीं उसमें एक वंशवृक्ष लिख कर रख दिया। जब राजकुमारी ने पुस्तक खोली तो उस कागज़ को देखकर कहा "मैंने इसे पहिले नहीं देखा था।" मिस लेहजन ने कहा "यह उचित नहीं समझा गया था कि तुम इसे देखो"। महाराणी ने इसपर कहा "राजसिंहासन मेरे लिये इतना निकट है। बहुत से बालक यह जान कर शेखी करेंगे, पर वे इसकी कठिनता का अनुमान नहीं कर सकते। हां, चमक दमक बहुत है, पर कठिनता कितनी अधिक है। अब मैं समझी कि आपने मुझे लैटिन पढ़ने के लिये इतना जोर क्यों दिया था और मैंने उसे भली भांति सीख भी लिया है। मैं सदा भली रहूंगी।" मिस लेहजन ने कहा "पर तुम्हारी चाची अडेलेड अभी युवती हैं, उन्हें यदि सन्तति हुई तो पहिले वह गद्दी पर बैठेगी।" राजकुमारी ने उत्तर दिया "हां, यदि यह हुआ तो मुझे दुःख न होगा, क्योंकि वह मुझे सबसे अधिक चाहती हैं"।

निदान इस प्रकार से लाड़ प्यार के दिन शिक्षा में बीत चले। एक दिन की बात है कि राजकुमारी, जब कि उनकी अवस्था बहुत ही छोटी थी, देखा देखी अपनी छोटी गाड़ी पर घास लाद कर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने लगीं। सङ्ग में मिस लेहजन भी थीं। इस खेल में महाराणी बहुत थक गईं, यहां तक कि अन्त में एक गाड़ी को पूरा पूरा लाद भी न सकीं। इसलिये उन्होंने मिस लेहजन से आज्ञा माँगी कि उसे वहीं छोड़ दें। इसपर वह बहुत बिगड़ीं और बोलीं कि यह तुम्हें पहिलेही सोच लेना था कि तुम कितना परिश्रम कर सकोगी। इस काम के तुम अधूरा नहीं छोड़ सकतीं। हार कर राजकुमारी को वह गाड़ी भरनी पड़ी। सारांश यह कि इस प्रकार की शिक्षा बचपन ही से इङ्गलैण्ड की भावी महाराणी को दी जाने लगी।

चौथे विलियम की यह बहुत इच्छा थी कि राजकुमारी उनके साथ प्रतिवर्ष कुछ मास रहा करे। पर डचेज़ आफ़ केण्ट को यह बात किसी अवस्था में स्वीकार न थी। यह बात यहां तक बढ़ी कि इसे लेकर कई बेर खुलाखुली दो चार बातें हो गईं। संसार में लोगों को गप्प करने के लिये ऐसे ही अवसर मिल जाते हैं। भांति भांति की गप्पें चारों ओर फैलने लगीं। पर महाराणी की माता बड़ी बुद्धिमती थीं। उन्होंने सोचा कि इङ्गलैण्ड के रईसों और ज़मींदारों को स्वयं देख लेना चाहिए कि उनकी भावी महाराणी कैसी हैं। इस उद्देश्य से राजकुमारी विक्टोरिया के साथ उन्होंने इङ्गलैण्ड के प्रसिद्ध प्रसिद्ध रईसों और ज़िमींदारों के यहां घूमना प्रारम्भ किया। सब जगह यथोचित सन्मान हुआ और लोगों ने देख लिया कि बजारू गप्प सर्वथा मिथ्या हैं, तथा राजकुमारी विक्टोरिया उन सब गुणों से पूर्णतया सम्पन्न हैं जो कि इङ्गलैण्ड की भावी महाराणी में होने चाहिए। राजकुमारी ने भी अपनी भावी प्रजा को देख कर वह पारिदर्शिता प्राप्त कर ली कि जो आगे चलकर उनकी बड़ी सहायक हुई।

राज्याभिषेक

जून सन् १८३७ में महाराणी के चाचा परलोकवासी हुए। अन्त समय राजकुमारी विक्टोरिया मिलने न आ सकीं। अस्तु मृत्यु के आध घण्टा पीछे डाक्टर हावली, आर्चबिशप केण्टरबरी और मारक्विस कानिंगहम केनसिंगटन राजभवन की ओर चले। प्रातःकाल होते होते वे वहां पहुंच गए। बहुत कुछ खटखटाने पर द्वार खुला

और एक कोठरी में ये तीनों महाशय बैठा दिए गए। थोड़ी देर के पीछे एक मज़दूरनी आई और उसने कहा कि राजकुमारी अभी सो रही हैं और उठाई नहीं जा सकतीं। डाक्टर हावली को इस पर दुःख हुआ और कुछ क्रुद्ध होकर उन्होंने कहा कि मैं राजकाज से यहां आया हूं। इसके आगे नींद कोई चीज़ नहीं है। निदान वे जगाई गईं और अपनी माता के साथ झटपट उस कोठरी में चली आईं। कुछ मिनट पीछे वैरोनेस लेहजन भी वहां पहुंच गईं। जिस समय आर्चविशप ने महाराज की मृत्यु का समाचार कहकर राजकुमारी से सिंहासन पर विराजने की प्रार्थना की, उस समय महाराणी के नेत्रों से अश्रुधारा बह निकली और एक शब्द भी मुंह से न निकल सका। इस समय का चित्र बहुधा देखने में आता है, जिससे माना वह घटना आंखों के सामने उपस्थित हो आती है। चित्त के ठीक होते ही महाराणी ने एक शोक प्रकाशक पत्र मृत महाराज की पत्नी अपनी चाची को लिखा। किसी नीच प्रकृति के पार्श्ववर्ती ने कहा कि पते पर "भूतपूर्व महाराणी" लिखना चाहिए। इसपर महाराणी ने उत्तर दिया कि मुझे यह उचित नहीं है कि मैं ही सबके पहिले महाराणी को उनके दुःख का स्मरण दिलाऊं। इसी बुद्धिमानी से महाराणी ने समस्त जीवन सफलता से राज्य किया। उसी दिन ग्यारह बजे मन्त्रियों की सभा का अधिवेशन हुआ और सभों ने सशपथ श्रीमती को अपनी महाराणी स्वीकार किया। उसी मास की २१ तारीख़ को साधारण प्रजा में महाराणी के राजसिंहासन पर विराजने के आनन्द में बड़ा उत्सव मनाया गया। सेण्ट जेम्स से लेकर केनसिंगटन राजभवन तक आदमियों की भीड़ इतनी अधिक थी कि कठिनता से पैर रखने को स्थान मिलता था। इस भीड़ के बीच में से खुली गाड़ी में बैठ कर जिस समय महाराणी को, जिनकी अवस्था इस समय केवल १९ वर्ष की थी, जाना पड़ा और चारो ओर से प्रजा मारे आनन्द के वह ध्वनि मचाने लगी कि आकाश पाताल एक हो गया, उस समय महाराणी अपने को न सम्हाल सकीं, नेत्रों में जल भर आया और वे कांपने लगीं। हां, राज्य पाकर भी महाराणी को अपने कर्तव्य को अपार और कठिन जानकर सोच हुआ। परन्तु जिस काम को उन्होंने अपने हाथ में लिया उसे यावत्जीवन बड़ी बुद्धिमानी और दूरदर्शिता से किया। राज्याभिषेक का उत्सव बड़ी धूमधाम के साथ २८ जून सन् १८३८ ई० को मनाया गया। इसमें ७००००० रुपया व्यय हुआ। जिन लोगों ने इस उत्सव को देखा था वे उसकी चमक दमक और सुन्दरता से आश्चर्यित हो थकित नेत्रों से अपने मानसिक भावों को तृप्त करते थे। ऐसे अवसर पर यह नियम है कि देश भर के जितने रईस हैं सब आकर महाराणी का मुकुट छू उनका हाथ चूमें। इसी नियम का वहां भी बर्ताव हुआ। जितने रईस एकत्रित हुए थे उन सभों में वृद्धतम लार्ड रोल थे। दो अन्य रईसों के सहारे से वे सम्हल के सिंहासन के निकट तक गए, पर वहां पहुंच कर उनका पैर कुछ चूक गया और वे लड़खड़ाते हुए सब सीढ़ियों के नीचे "रोल" करते हुए आपड़े और अपने नाम को उन्होंने सार्थक कर दिखाया। महाराणी के हृदय में इस घटना को देखकर बड़ी दया हो आई। जब दूसरी बेर लार्ड रोल पुनः वहां तक पहुंचने लगे तो महाराणी ने आगे बढ़ कर उनसे भेंट की और उनका उचित सत्कार कर अपने उदार करुणार्द्र हृदय का पूर्ण परिचय दिया। इस बात को देख और सुन इङ्गलैण्ड की प्रजामात्र के आनन्द की सीमा न रही। वास्तव में बड़े बड़े लोगों के छोटे से छोटे काम भी बड़े से बड़ा फल उत्पन्न करते हैं। निदान बड़े आनन्द मङ्गल से यह उत्सव मनाया गया।

विवाह

राज्याभिषेक का उत्सव होने के पूर्व से ही महाराणी के विवाह की चर्चा देश भर में फैल रही

थी। कोई सोचता था कि रोमन कैथलिक से विवाह होगा। कोई कुछ और ही सोचता, यहां तक कि वास्तविक वृत्तान्त के न मिलने से देशभर में भांति भांति की गप्पें उड़ने लगीं। कोई कोई गुप्त रीति से विवाह हो जाने ही का स्वप्न देखने लगे। इस गड़बड़ के साथ ही साथ कुछ मतवाले अंग्रेज़ी रईस भी इस दुराशा से उन्मत्त हो गए थे कि वेही महाराणी के पाणिग्रहण में सफीलभूत होंगे और यह उन्मत्तता किसी किसीके पक्ष में यहां तक बढ़ी कि वे या तो नोकरी देकर देश से बाहर निकाल दिए गए, अथवा पूलिस तैनात की गई कि महाराणी की रक्षा रक्खे। पर महाराणी का माता और उनके चचा ने कन्या की बाल्यावस्थाही में उसके लिये उपयुक्त वर चुन रक्खा था। यह सेक्सोकोवर्ग के प्रिन्स अलबर्ट थे। इन्हें भी बाल्यावस्था ही से इस भावी सम्बन्ध की सूचना दे दी गई थी। सन् १८३६ ई० में ये अपने पिता तथा भाई के साथ इङ्गलैण्ड आए। उनकी सुन्दरता, शान्त स्वभाव और हँसमुख चेहरे को देख कर महाराणी का मन मोहित हो गया और उन्होंने ७ जून को अपने मामा को एक पत्र में यह लिखा "मेरे प्रिय मामा! अब मुझे आपसे केवल यही प्रार्थना करनी है कि आप अब उसके स्वास्थ्य की पूरी सुधि रक्खेंगे और उसे अपनी आखों के साम्हने रक्खेंगे जो मेरे हृदय को इतना प्यारा है। मुझे विश्वास है कि इस विषय के सम्बन्ध में, जो मेरे लिये अत्यन्त आवश्यक है, सब अच्छा होगा"। यह सम्वाद मंत्रीवर्ग को दिया गया और धीरे धीरे सब प्रकार की गप्पें शान्त हो गईं और देश में विवाह की चर्चा होने लगी।

इन्हीं दिनों में दो एक ऐसी घटनाएं राजप्रासाद में हुईं जिनसे लोगों में बहुत कुछ हल चल मचगई। ऐसे अवसर पर प्रधान मंत्री लार्ड मेलबोर्न ने यह उचित समझा कि विवाह शीघ्र हो जाना चाहिए। इसलिये अक्तूबर सन् १८३९ में प्रिन्स अलबर्ट पुनः इङ्गलैण्ड आए। इस समय उनके चेहरे से बालकपन के चिन्ह सब लुप्त हो गए थे और उनके स्थान पर यौवन की सुन्दरता और मनोहरता की छवि छा रही थी। यद्यपि अंग्रेज़ी साधारण प्रणाली यही है कि पहिले पुरुष स्त्री से विवाह का प्रस्ताव करता है, परन्तु बड़े राजघरानो में और विशेष कर ऐसे अवसरों पर जब कि स्त्री स्वयं कहीं की महाराणी हो, यह नियम पलट दिया जाता है। अतएव कई दिनों तक महाराणी ने मारे लज्जा और संकोच के इस बात को टाला। अन्त एक दिन दुपहर के समय अपने प्यारे प्रिन्स अलबर्ट को अपने कमरे में बुलवाया। भिन्न भिन्न विषयों पर बात चीत होती रही। अन्त महाराणी ने नीची आंखें करके मीठे स्वर से पूछा "क्या यह सम्भव है कि मेरे लिये तुम अपना देश छोड़ सको?" प्रिन्स ने उठ महाराणी को अपने गले लगाया और सदा सर्वदा के लिये अपना देश छोड़ महाराणी के साथ रहने की प्रतिज्ञा की। निदान इस प्रकार सब बातों के निश्चय हो जाने पर पार्ल्यामेण्ट में विवाह की चर्चा उठाई गई और महाराणी ने विवाह के प्रस्ताव को वहां स्वयं उपस्थित किया। समस्त देश ने सानन्द इसे स्वीकार किया और राजनीति सम्बन्धी सन्धिपत्रादि के लिख जाने और सब प्रारम्भिक बातों के निश्चय हो जाने पर १० फरवरी, सन् १८४०, को बड़े समारोह के साथ विवाह हो गया और दम्पति लैाकिक रीति से स्नेहपाश में बँध कर सब प्रकार के गार्हस्थ्य सुखों का आनन्द लेने लगे। प्रजा को भी शान्ति हुई कि अब महाराणी का पति उनकी रक्षा करेगा और उनके हित में सदा तत्पर रहेगा।

महाराणी पर आक्रमण

महाराणी के गर्भवती होने पर यह सोचा गया कि प्रसवकाल में ही महाराणी का परलोकवास हो जाय तो फिर संतति के नियत वय तक के लिये किसे राज्य का प्रबन्ध सैांपना चाहिए। इस बात पर विचार हो ही रहा था कि १० जून सन् १८४० को, जब कि महाराणी और उनके पति गाड़ी पर हवा खा रहे थे, एडवर्ड आक्सफ़ोर्ड नाम के

एक लड़के ने महाराणी पर गोली चलाई। भाग्य से वह गोली किसीको न लगी और आक्सफ़ोर्ड उसी स्थान पर पकड़ा गया। पर न्यायालय में वह पागल सिद्ध किया गया और छोड़ दिया गया। इसपर कई दिनों तक जब कभी महाराणी बाहर निकलतीं तो सैकड़ों स्त्री और पुरुष गाड़ी घोड़ों पर महाराणी के साथ जाते और स्थान स्थान पर जय ध्वनि से प्रजा अपने हार्दिक आनन्द को प्रगट करती। इस घटना के होते ही प्रिन्स अलबर्ट रिजेण्ट नियत किए गए, जिससे उनके मन के जो दुखदाई भाव थे वे दूर हो गए। सन् १८४२ में फ़्रांसिस और बीन नाम के दो पुरुषों ने पुनः महाराणी के जीवन पर आघात करना चाहा। सन् १८५० में एक पुरुष ने पुनः आक्रमण किया। यह सात वर्ष के लिये देश से निकाल दिया गया। सन् १८६९ में ओकोनोट को भी इस अपराध में १८ मास का कारागारवास मिला। महाराणी ने इसपर कृपा कर उसे अपने व्यय से आस्ट्रेलिया भेज दिया। सन् १८८२ ई० में महाराणी पर अन्तिम आक्रमण किया गया। पर धन्य है उस सर्वशक्तिमान जगदीश्वर को कि जिसकी रक्षा वह किया चाहता है उसे सब भांति से बचा सकता है।

सन्तति

सब मिलाकर महाराणी की ९ सन्तान हुए। प्रथम एक कन्या उत्पन्न हुई, जिनका विवाह जर्मनी के राजराजेश्वर से हुआ और जो आधुनिक राजराजेश्वर की माता हैं। दूसरी सन्तति प्रिंस आफ़ वेल्स हुए, जो इस समय राजराजेस्वर सातवें एडवर्ड के नाम से राजसिंहासन पर विराजते हैं। इनका जन्म ९ नवम्बर सन् १८४१ को हुआ। तीसरी सन्तति एक कन्या २५ अप्रैल सन् १८४३ को उत्पन्न हुई। इनका नाम प्रिन्सेस आलिस हुआ और विवाह ग्रांड ड्यूक आफ़ हेस से हुआ। महाराणी की जीवित अवस्था ही में इस कन्या का परलोकवास हो गया था। चौथी सन्तति एक पुत्र ड्यूक आफ़ एडिनबरा ६ अगस्त सन् १८४४ को उत्पन्न हुए। ये भी परलोकगामी हो चुके हैं। पांचवीं और छठवीं सन्तति दोनों कन्याएं हुईं। पहिली का नाम प्रिन्सेस हेलेना और जन्म २५ मई सन् १८४६ को, और दूसरी का नाम प्रिन्सेस लूइसा और जन्म १८ मार्च सन् १८४८ को हुआ। महाराणी की जितनी सन्तति हुईं सबका विवाह सम्बन्ध कहीं न कहीं के राजघरानों से ही हुआ। पर प्रिन्सेस लुइसा का विवाह ड्यूक आफ़ आरगाइल से, जो इङ्गलैण्ड के बड़े रईसों में हैं, हुआ। इस सम्बन्ध का कारण केवल यही है कि महाराणी तथा उनके पति की इच्छा सदा यही रही कि पुत्र तथा कन्या का विवाह ऐसे स्थान पर और ऐसे स्त्री तथा पुरुष के साथ हो जिनमें परस्पर प्रीति हो और जिसमें दोनों सुखपूर्वक अपना जीवन बिता सकें। योरप में यद्यपि सामाजिक नियम यह है कि स्त्री पुरुष, पति पत्नी को अपनी इच्छा के अनुकूल चुन लेते हैं और उनके माता पिता इसमें किसी प्रकार का विरोध नहीं करते, पर राजघरानों में प्रायः इस सामाजिक नियम का पालन राजनैतिक कारणों से नहीं हो सकता। इस अवस्था के रहने पर भी महाराणी का उद्योग सदा यही रहता था कि पुत्र और पुत्री सम्बन्ध करके सुखी रहें। वास्तव में माता पिता का यह धर्म होना चाहिए कि अपनी सन्तति के सुख पर ध्यान रक्खें। हमारे भारतवर्ष में तो आजकल प्रायः विवाह ऐसी छोटी अवस्था में कर दिया जाता है कि विचारे लड़कों लड़कियों को यह ज्ञान ही नहीं रहता कि उस कौतूहलपूर्ण घटना से वे किस प्रकार अनजाने अपने समस्त जीवन के दुःख सुख का निपटेरा कर रहे हैं। उन्हें तो वह एक खेल सा जान पड़ता है। पर हा! इस खेल ही से देश का देश अधोगति को चला जा रहा है। इस बाल अथवा आग्रहपूर्ण विवाह का परिणाम यह होता है कि या तो लड़के लड़की कुचरित्र निकलते हैं, अथवा ईर्षा द्वेष आदि से घर का नाश होता है और सन्तति इतनी बलहीन

उत्पन्न होती है कि यदि इसी रीति का प्रचार देश में रहा तो काल पाकर भारतवासियों की वंश ही न रह जायगी। पूर्व काल में इसी भारतवर्ष में पिता के रहते पुत्र का मरना असम्भव था, अथवा किसी महाघोर पाप का प्रतिफल समझा जाता था। पर आज इसी भारतवर्ष में सैकड़ों क्या सहस्रों लड़के लड़कियां या तो गर्भ ही में मर जाते हैं, या उत्पन्न हो बालक माता पिता पर मोह का जाल फैला इस लोक को छोड़ परलोक को चल बसते हैं। न जाने भारत के भाग में क्या बदा है। अस्तु, सातवीं और आठवीं सन्तति महाराणी को दो पुत्र हुए। इनका जन्म १ मई सन् १८५० और ७ अप्रैल सन् १८५३ को हुआ। प्रिन्स लिओपोल्ड महाराणी की जीवित अवस्था ही में सुरधाम सिधारे थे। नौवीं तथा अन्तिम सन्तति प्रिन्सेस बिएट्रिस १४ अप्रैल सन् १८५७ को हुई। निदान सब मिलाकर महाराणी को ५ कन्याएं और ४ पुत्र हुए, जिनमें इस समय ४ कन्याएं और २ पुत्र वर्त्तमान हैं।

राज्य की कुछ मुख्य घटनाएं

इधर गार्हस्थ्य सुख समृद्धि के साथ राज्य में भी अनेक विचित्र घटनाएं हुईं। पहिले अनाज पर भी चुङ्गी लगती थी जिससे गरीब लोगों को महँगा अन्न मोल लेकर खाना कठिन होता था। महाराणी के राजत्वकाल में यह चुङ्गी उठा दी गई। रेल और तार की, जिनसे अन्तर और समय का मानो एक प्रकार से मूलही नष्ट हो गया, महाराणी के राजत्वकाल में पूर्ण उन्नति हुई। सन् १८४८ में आयरलैण्ड में महाघोर अकाल पड़ा। लाखों मनुष्य भूखों मर गए। उस समय के मंत्री-गणों ने बड़ी असावधानी से काम किया, जिसका परिणाम यह हुआ कि आयरलैण्ड में अनेक उपद्रव हुए और लोग शस्त्र ले मरने मारने पर तैयार हो बैठे। बड़ी कठिनता से यह उपद्रव शान्त किया गया। महाराणी के पति कला कौशल तथा विद्या-सम्बन्धी विषयों से विशेष अनुराग रखते थे और ऐसे उद्योगों में अग्रसर रहकर देश का उपकार करते थे। सन् १८५१ ई० में इन्होंने एक बड़ी भारी प्रदर्शिनी लण्डन में की। पहिले इस उद्योग का बड़ा विरोध किया गया, पर प्रदर्शिनी हो जाने पर इङ्गलैण्ड के व्यापार की बहुत वृद्धि हुई और लोगों की आंखें खुलीं कि ऐसे उद्योगों से देश को कितना लाभ पहुंच सकता है। महाराणी के राजत्वकाल में छोटी लड़ाइयों के अतिरिक्त कई बड़ी बड़ी लड़ाइयां हुईं, जिनमें अंग्रेजों को या तो स्वयं लड़ना पड़ा, अथवा योरप के किसी न किसी राज्य का साथ देना पड़ा। इन लड़ाइयों में क्रीमियन युद्ध, भारतवर्षीय विद्रोह, आस्ट्रो-प्रूशियन युद्ध, फ्रांको-जर्मन युद्ध और अफ्रिका का युद्ध प्रसिद्ध हैं। इन घटनाओं में यद्यपि अंग्रेज़ अन्त में विजयी हुए, पर इन्हें प्रत्येक में बड़ा कष्ट उठाना और करोड़ों रुपए व्यय करने पड़े। इन युद्धों का वृत्तान्त देने से व्यर्थ लेख बढ़ जायगा, पर वास्तव में ये विषय तो ऐसे हैं कि स्वतंत्र लेख में इनका वर्णन किया जाय।

इन्हीं दुर्घटनाओं के बीच में सन् १८६१ में महाराणी की माता का परलोकवास हुआ और उसके आठ महीने पीछे उनके पति प्रिन्स एलबर्ट भी इस असार संसार को छोड़ सुरधाम पधारे। इस दैवी दुर्घटना से महाराणी को जो दुःख हुआ वह अकथनीय है। शेष जीवन भर फिर महाराणी को वह सुख और शान्ति न प्राप्त हुई। महाराज और महाराणियों के साथ अत्यन्त घनिष्ट मित्रभाव का बर्ताव केवल पति या पत्नी कर सकती हैं। दूसरे लोग केवल प्रतिष्ठा और सन्मानपूर्वक बर्ताव कर सकते हैं। इन बातों के रहते भी महाराणी के राजकाज में उनके पति परम सहायक रहते थे और देश के हित तथा उसकी उन्नति का उन्हें अहर्निशि चिन्तन बना रहता था। अनेक इतिहास लेखकों का अनुमान है कि यदि महाराणी के पति जीवित रहते तो जो अनेक दुर्घनाएं देश में हुईं वे कदापि न होतीं। जो कुछ हो, प्रिन्स

अलवर्ट सा सुशील, विद्वान्, रसज्ञ, नीतिनिपुण और दयावान सहायक फिर महारानी को जन्म-भर कोई दूसरा न मिला। इसके लिये उन्होंने अपने शेष जीवनकाल को शोक अवस्था ही में बिताया। प्रिन्स अलवर्ट की मृत्यु के पीछे महारानी ने एक प्रकार से एकान्तवास ही की रुचि प्रगट की और साधारण उत्सवों में प्रजा में आने जाने से अपनेको बहुतकाल तक बचाए रक्खा।

जुबिली

दुःख और शोक का निवारण करनेवाला केवल एक समय ही है। इसीका मृदु प्रभाव ऐसा पड़ता है कि जिससे ऐसे दुःख भी भूल जाते हैं जिनसे एक समय ते मनुष्य के जीव पर आ बीतने की आशंका रहती है। इसी प्राकृतिक नियम के वशीभूत होकर महारानी ने समय पाकर और राजकाज में दत्तचित्त रहकर अपने दुःख को कुछ कुछ भुलाया। २० जून सन् १८८७ में महारानी को राजसिंहासन पर बैठे ५० वर्ष पूरे हो गए। प्रजा ने जुबिली का महोत्सव मनाना चाहा। प्रिन्स अलवर्ट की मृत्यु और जुबिली के उत्सव में २७ वर्ष का अन्तर पड़ा। इस २७ वर्ष में अनेक घटनाएं हुईं जिन सबका वृत्तान्त इतिहासकारों ने लिखा है। यहां पर उनके वर्णन करने की आवश्यकता नहीं है। केवल इतना ही कह देना उचित होगा कि कितने ही बिवाद लड़ाइयों और दुर्घटनाओं को महारानी ने स्वयं अपने प्रभाव और प्रताप से रोका। ज्यों ज्यों समय बीतता चला, महारानी का एकान्तभाव दूर होता चला। इस प्रकार सन् १८८७ में जुबिली का उत्सव बड़ी धूमधाम से मचाया गया। हमलोगों में से अनेकों ने इसके वृत्तान्त पढ़े हैं। भारतवर्ष के अनेक राजे महाराजे भी इस उत्सव में इङ्गलैण्ड पधारे थे। इस उत्सव के १० वर्ष पीछे पुनः हीरक जुबिली का उत्सव मानाया गया और यह बिचार था कि प्रति दस वर्ष यह उत्सव मनाया जाय करे। पर ईश्वर की इच्छा के आगे मनुष्य की इच्छा नहीं फलीभूत हो सकती।

अन्त

महारानी के अन्तिम वर्ष अनेक दुःखपूरित घटनाओं से पूरित रहे। सीमा युद्ध, सुदान युद्ध और दक्षिण अफ्रिका के युद्ध से जो दुःख महारानी के हृदय को हुआ वह सब लोगों पर विदित है। अन्त समय तक महारानी की यह आन्तरिक इच्छा थी कि किसी प्रकार बुअरयुद्ध समाप्त होकर शान्ति फैले। इन राजनैतिक घटनाओं के साथ महारानी को अपने पुत्र और पौत्रों के असामयिक परलोकवास से जो दुःख और शोक सहन करने पड़ा, उनके लिखने की आवश्यकता नहीं है। पर इन सब बातों के रहने पर भी महारानी ने अपने कर्तव्य पालन में किसी प्रकार की ढील नहीं की, यहां तक कि मृत्यु के दिन तक उनके पास कई बण्डल कागज़ हस्ताक्षर करने के लिये पड़े थे। इस आदर्शपूर्ण और श्लाघनीय तथा च राजाओं के लिये अनुकरणीय चरित्र की महारानी को पाकर इङ्गलैण्ड ने जो उन्नति की उसको यावत् चन्द्रदिवाकर इतिहास साक्षी देता रहेगा। महारानी के स्वभाव की सरलता और उत्तमता का वर्णन जहां तक किया जाय थोड़ा है।

यह बात सब लोगों को बिदित है कि महारानी प्रायः अपने प्रासाद के चारों ओर रहनेवाले दीन दुखियों की सेवा सुश्रूषा स्वयं किया करती थीं। प्रातःकाल वे प्रायः निकलतीं और झोपड़ों में घूम कर दीन दुखियों की सुध ले आवश्यक वस्तुओं से उनकी सहायता करतीं और यह कहीं प्रगट न करतीं कि वे इङ्गलैण्ड की महारानी हैं। कई अवसरों पर महारानी को स्वयं उस समय तक रहना पड़ा जब तक उस मृतप्रायः स्त्री या पुरुष की आत्मा इस अनित्य शरीर को छोड़ सुरधाम को न सिधार जाय। सारांश यह कि महारानी अपनी प्रजा से सदा अति स्नेह रखतीं और उनके दुःख सुख में अपनी वास्तविक सहानुभूति प्रगट करतीं। महारानी सा

सज्जन, सरल और मृदु स्वभाव राजगणों में से बिरले हो किसीके भाग्य में होगा। भारतप्रजा पर भी महाराणी का कितना स्नेह था यह यहां के लोग भली भांति जानते हैं। भारतवर्ष क्या संसार के इतिहास में महाराणी का चरित्र अपना प्रभाव डालता रहेगा। ईश्वर की सृष्टि में अनेक राजे महाराजे हुए, होते हैं और होंगे; पर वास्तव में सुराज्य उन्हींका कहा जा सकता है कि जिनसे प्रजा प्रसन्न रहकर उन्नति के शिखर पर नित्य चढ़ती जाय। भारत की प्रजा परम भक्त है। उसका सन्तोष दूर से अपने राजा का नाम सुन कर और उसकी प्रतिमूर्ति देखकर नहीं होता। उसकी इच्छा अपने राजा को स्वयं अपने नेत्रों से देखने और अपने हाथों से पूजन की रहती है। महाराणी ने कई बेर भारतवर्ष आने का विचार किया, पर कई कारणों से यह इच्छा उनकी पूरी न होसकी। अस्तु अब अन्त में हमारी सच्चिदानन्द परब्रह्म परमेश्वर से यह प्रार्थना है कि महाराणी की आत्मा को शान्ति दे और उनके वंशजों को सुबुद्धि कि उनके कमाए यश की दिनों दिन वृद्धि हो।

प्रेम का फुआरा

हुसेनी बी का वयक्रम प्रायः बीस वर्ष का हो गया परन्तु बिचारी का व्याह अब तक नहीं हुआ था। उसकी सब सखी सहेलियां उस समय अपने अपने पतियों के साथ आनन्द से गार्हस्थ्य धर्म्म निवाह रही थीं, परन्तु बिचारी हुसेनी के भाग्य में यह सुख विधाता लिखना ही भूल गए थे। वह कभी कभी रात्रि के समय पड़ी पड़ी सोचा करती कि इसका क्या कारण है कि कोई पुरुष मुझसे निकाह तक करने को अग्रसर नहीं होता। क्या मैं किसी बात में गांव की और बेटियों से कम हूं? वर्ष में दो एक वार ऐसी चिन्ता उसके मनाकाश में स्फुरित हो जाती थी। पर बिचारी क्या करे, विधाता ने उसके विषय में एक और बड़ा भारी भ्रम कर डाला था। बीर पुरुषों के रचने की सारी सामग्रियां उठाकर भूल से उन्हें स्त्री के सांचे में ढाल दिया था। शरीर उसका दीर्घाकार, गठीला, सब अङ्ग प्रत्यङ्ग वीर जनों के समान पुष्ट और बज्र सरीखे कठिन थे। देखने से जान पड़ता था कि कोई महाबली, स्त्री के वस्त्र पहिर कर सामने खड़ा है। तिसपर सीतला देवी ने उसके मुखमण्डल में अपनी अपूर्व छटा अङ्कित कर दी थी, और उसके चञ्चल नेत्र ऐसे थे कि एक सदा दूसरे की ओर परस्पर निहारा करते थे। विवाहाकांक्षी कोई पुरुष चाहे इस रूपराशि से सन्तुष्ट न हो, परन्तु हुसेनी प्रायः कहा करती "मैं किसी पुरुष से भी नहीं डरती"। कारण इसका यह है कि सचमुच दो चार गांवों के बीच में कोई भी ऐसा युवक नहीं था जो दौड़ने, कूदने, बड़े बड़े लकड़ चीरने, वृक्षों पर चढ़ने, और भारी से भारी बोझे के उठा ले जाने में उसका साथ दे सकता हो।

यद्यपि उसका वाह्य शरीर सूखा साखा काठ मात्र जान पड़ता था, तौभी भीतर से वह पूर्णतया नीरस न थी। स्वर उसका मधु के समान मधुर चाहे न रहा हो, परन्तु उसमें अपने ढङ्ग की एक निराली मृदुता अवश्य थी। देखने से वह बड़ी भोली भाली जान पड़ती थी और अन्तःकरण स्त्रीजनोचित कोमलता से रहित न था। हां, वारम्वार चेष्टा करने पर भी उसका पिता जब उसके उपयोगी कोई वर नहीं ठहरा सका, तो उसका मन पुरुष जाति की स्वार्थपरता और अहृदयता पर विचार कर उनसे पूरा पूरा विरक्त हो गया था, यहां तक कि यदि कभी कोई पुरुष उससे विनय के साथ वार्त्तालाप करने की चेष्टा करता भी तो वह आग बबूला हो जाती। छल उसे छू तक नहीं गया था, अन्तःकरण की वह बड़ी सीधी और सच्ची थी, और साधारणतः सब लोग उसे चाहते थे। उसके हृदय में सन्तोष का भण्डार था, परन्तु जब एक एक कर सब किसानों की कन्याएं ससुराल चली गईं तो कभी कभी उसका भी मन अधीर होने लगा।

इसी समय उसका पिता समीप के किसी हाट में दो गाड़ी ऊंख बेचने गया था। वहां उसकी किसी आत्मीया ने उसकी दशा सुन कर उसके पिता से कहा कि तुम्हारे किए कुछ न होगा। आज तुम्हारी स्त्री जीवित रहती तो हुसेनी की गोद में दो एक लाल खेलते रहते। उसे कल ही तुम मेरे यहां भेज देना। मैं देखूंगी यदि यहां उसकी सगाई हो जाय। फिर क्या था, मुख्य बात छिपा कर उसके पिता ने लड़की से कहा कि हुसेनी बेटी, तुम्हारी मौसी ने तुम्हें बुलाया है; सो तुम आज ही वहां जाओ।

उसकी इस नवीन मौसी का घर प्रायः ८।१० कोस पर था। परन्तु उस देश के बीहड़ पथों में एक अकेली बालिका के लिये ऐसी यात्रा कुछ सहज न थी। हुसेनी को तो यह अपने जीवन भर में एक अद्भुत घटना सी जान पड़ने लगी। और जब वह अपने पिता के काने टट्टू पर सवार हो कोस भर की दूरी पर एक गांव में पहुंची तो अपने घर लौट जाने की इच्छा उसके मन में प्रबल होने लगी। परन्तु उसकी दो सहेलियां इसी गांव में ब्याही थीं। जब उनसे उसकी भेंट हुई तो वे उसे देख बड़ी प्रसन्न हुईं और कहने लगीं कि सखी, तेरे दिन अच्छे आए जान पड़ते हैं। देखिओ। अब तू बड़े बड़े सुख भोगेगी। अस्तु, भाग्य में उसके चाहे सुख लिखा हो चाहे दुःख, उसका मन उदास ही होता जाता था और कोई चुपके से उसके मन में मानो कह रहा था कि दिन बुरे आने वाले हैं। पर विचारी क्या करे, उसकी सखियां और दूसरी ग्रामवासिनी स्त्रियां, जो समझती थीं कि भोली हुसेनी नए नए दृश्य देखकर भौचक सी हो गई है, और शिशुकाल से जिस गांव में इतने दिन काटे थे, उसीकी ममता उसके मन को डांवाडोल कर रही है, उसे ढाढ़स देने लगीं; और किसी किसी बड़ी बूढ़ी ने कहा कि सद्दू मियां कुछ बेसमझ थोड़े हैं जो उन्होंने बिना विचारे अपनी बेटी को घर से इतनी दूर भेजा है। इसमें अवश्य कुछ भेद है; और हुसेनी बी, तू देखिओ, तेरे दिन अब अच्छे आए। निदान सब लोगों के इस भांति कहने सुनने से उसने घर लौटने का विचार छोड़ दिया और अपने उच्चैःश्रवातनय पर फिर आरोहण कर वह अपने गन्तव्य पथ पर चली।

बिचारी सीधी सादी तो थी ही। अपने नित्य नैमित्तिक से अधिक उसको आज तक कभी कुछ करने का प्रयोजन नहीं पड़ा था। परन्तु अपने घर से निकलने के पूर्व से आरम्भ कर सखिओं के गांव तक उसे सब लोगों ने नाना प्रकार के इतने उपदेश दिए थे, और बिचारी के दुर्बल मस्तिष्क में इतनी वक्तृताओं की धारा भर दी थी, कि उसकी समझ में कुछ ठीक ठीक नहीं आता था कि आज यह है क्या! निदान ऐसे ही सोचते सोचते उसे किसी बात की भी पूरी पूरी सुध बुध न रही और कुछ घबराई सी आंखें फाड़ कर वह इधर उधर देखने लगी। परन्तु एक स्थान पर जब मार्ग की दो शाखाएं हो गईं, उसने टट्टू की रास खींची और ठिठक कर वह अपने चारो ओर देखने और उचित मार्ग को स्मरण करने लगी। मनुष्य क्या, कोई पखेरू तक वहां नहीं देख पड़ता था कि वह उससे राह पूछ ले, कि उसके पिता ने उसे बांई ओर मुड़ने को कहा था कि दाहनी। निदान अनुचित मार्ग ही पर उसने घोड़ा चला दिया और अपने आप कहने लगी कि यही उचित मार्ग है। इसलिये वह घोड़े को जल्दी जल्दी चलाने लगी। परन्तु थोड़ी दूर आगे बढ़ कर शङ्काओं पर शङ्काएं उसे सताने लगीं। कभी रुक जाती, कभी टट्टू के शरीर पर कस कर चाबुक जमा देती, और कभी निरास होकर फिर ठहर जाती। परन्तु यह अब उसे स्पष्ट जान पड़ा कि उसके मित्रवर्गों ने जिस मार्ग पर उसे चलने कहा था, वह उसे छोड़ कहीं और ही जा रही है।

अस्तु मनुष्य कैसा ही साधारण क्यों न हो, मार्ग भूल जाना उसे अच्छा नहीं लगता। परन्तु जब किसी लेख की नायिका पर ऐसी विपत्ति आ पड़ती है तो उसे साधारण दृष्टि से नहीं देखना

चाहिए। क्योंकि नियम यह है कि इस भूल के कारण ऐसे अवसर पर निश्चय प्रकृति भी रौद्ररूप धारण कर लेती है। पहिले से आकाश चाहे कितना ही निर्मल क्यों न रहा हो, ज्योंही नायिका का मन बिकल हुआ, कि प्रकृति भी तुरन्त उससे बैर कर बैठती है। मेघ सिर पर दौड़ते फिरते हैं, दामिनी दमकने लगती है और प्रभञ्जन भी मनमानी आंधी बहाने लगता है। पुनः बादल फट मूसल धार बरसाने लगते हैं। बार बार की ऐसी दुर्घटनाओं से हमें तो यों ज्ञान होता है कि सुन्दरी युवतिओं को इस भांति घर से अकेली निकलना ही उचित नहीं है। प्रति पदक्षेप में भूल भुलैंयां में उनके पड़ जाने का डर बना रहता है और एक बार तनिक भी भूल हुई कि लौकिक समाज भी उस भटकी स्त्री को सहायता देने से मुख मोड़ लेता है।

हमारे इस लेख की नायिका श्रीमती हुसेनी की भी दशा इस अखण्डनीय नियम से निराली क्यों होने लगी थी। परन्तु पूर्णतया भीग जाने के पहिले ही और और नायिकाओं के समान उसे भी एक टूटी गढ़ी में आश्रय मिला, जिसे देखतेही उसने उसकी ओर घोड़े का मुंह मोड़ा। दूर से देखा कि एक पुराने खँड़हर की चोटी पर से धुंआ उठ रहा है। डरती डरती वह उसकी ओर बढ़ी। परन्तु खँड़हर के भीतर घुसने के पहिले एक टूटी खिड़की के भीतर झांक कर उसने इस बात का पूरा पूरा निश्चय कर लिया कि यहां का एकान्तवासी जीव पुरुष है अथवा स्त्री। पाठकों को स्मरण होगा कि पुरुष नामधारी जीवोंसे हुसेनी को स्वाभाविक घृणा थी। परन्तु वहां केवल एक बुढ़िया रहती थी। उसे देख हुसेनी के जी में जी आया और वह निधड़क भीतर घुस गई। बुढ़िया का सारा शरीर जराजर्ज्जरित हो गया था, परन्तु उसकी वाक्‌शक्ति में अब तक पूर्ण तेज विद्यमान था। उसकी वक्तृता में न कौमा का पता लगता था, न सेमीकोलन या फुलस्टाप का। जब हुसेनी के आगमन का पूरा समाचार उसे मिल गया तो उसने ओष्ठ रूप दो कपाट खोल दिए और अनर्गल बोलने लगी।

वृद्धा ने हुसेनी को समझा दिया कि अमुक स्थान में तू राह भूल गई थी। फिर उसने अपनी जीवनी की स्थूल सूक्ष्म सब घटनाओं को उसे कह सुनाया। कदाचित् पाठक को उसके सुनने की अभिलाषा हो, परन्तु उस कथा की आवृत्ति का करना यहां हमें निष्प्रयोजन जान पड़ता है। बस, इतना ही सुन कर आप धीरज धरिए कि उसने हुसेनी का बड़ा सत्कार किया और सब प्रकार के सुख की सामग्री भी उसके पास उस समय उपस्थित थी। वहां पर सूखी लकड़िओं का ढेर लगा था, चट हुसेनी के वस्त्र सुखाने और शीत निवारण करने के लिये उसने आग सुलगा दी। फिर दो टिक्कड़ रोटी के सेंक कर उसके सामने धरे, जिसे हारी थकी हुसेनी तुरन्त चट कर गई और भर पेट जल पान कर पथ के सब क्लेशों को भूल गई।

पानी अब तक बरस रहा था, इस कारण ऐसे आश्रय में आकर हुसेनी बड़ी प्रसन्न हुई और बुढ़िया को धन्यवाद देने लगी और उस दिन कहीं और जाना असम्भव जान बुढ़िया को उसके गृहकार्य में सहायता देने लगी। बुढ़िया भी उसकी उदारता का परिचय पाकर बड़ी सुखी हुई। और बड़ी रात तक बैठी बैठी उसे अपनी मनमानी कहानियां सुनाती रही। उस समय यदि आप उन दोनो को देखते तो आपको यह ज्ञात न होता कि ये लोग बहुत काल के पुराने मित्र नहीं हैं।

"अहा!"—बुढ़िया बोली, क्योंकि वह तब से अब तक अनर्गल बोलही रही थी—"अहा! तू बड़ी अच्छी लड़की है। मैं तुझे अपने अन्तःकरण से चाहती हूं। तू मेरे मन में बस गई है। और जब कोई मेरे मन में गड़ जाता है तो, हुंः—उसके लिये मैं कुछ न कुछ करही डालती हूं"।

हुसेनी ने कहा "तुमने मुझपर बड़ी कृपा की है और मैं इसे कभी न भूलूंगी। अगली ईद में तुम्हें हमारे घर आना होगा। क्यों आओगी न?"

बुढ़िया ने कहा "तू मुझे अपने घर ले जाकर अवश्य सुखी होगी। हां, हां, उसके लिये अभी बहुत दिन हैं। पर अब एक बात तो मुझे बता, तेरे मन में कोई अरमान है? बेधड़क मुझसे कह दे, अल्लाः ने चाहा तो मैं उसका उपाय निश्चय करूंगी। बता, तेरे दिल में किस बात की चाह है?"

हुसेनी ने उत्तर दिया "मुझे टिकियापुर की राह बता दो, कि मैं फिर न भूलजाऊं"। परन्तु इसे सुन कर वृद्धा खिलखिला कर हंस पड़ी, यहां तक कि उसे हँसते हँसते खांसी आगई और नेत्रों से धारा बह चली। जब कुछ शान्त हुई तो बोली "बेटी, मेरी हँसी से बुरा न मानना। पर तू है बड़ी अल्हड़। मैं राह बाट की बात तुझसे नहीं पूछती। मैं कुछ और ही बात पूछ रही हूं। अरी, तूने अपने अगले दिनों की बात भी कुछ सोची है? तेरी उमर में तो सब किसीको बड़े बड़े अरमान हुआ करते हैं। हां,-मुसकराई! ये:! अब मेरी बात को समझ गई! अब बता वह क्या है"।

अब तो दोनों ओर से बहुत खींचाखींची होने लगी, जिसका फल थोड़ी देर पीछे यह हुआ कि हुसेनी ने अपने जन्म, निवासस्थान, और अपने विवाह के लिये चेष्टा में पिता की निष्फलता आदि सब वृत्तान्त वृद्धा के कूट प्रश्नों के आगे पेट से धीरे धीरे निकाल दिए। चतुरा वृद्धा ने शनैः शनैः उससे यह भी स्वीकार करा लिया कि यद्यपि पुरुषजाति की अहृदयता से वह बहुत घृणा करती है, तौभी यदि कोई सच्चा पुरुष उसे मिल जाय तो वह निश्चय उसके हाथ आत्मसमर्पण कर दे।

"पर, किसीका नाम भी तो बता। तेरा जी कभी किसी की ओर झुकता है? जो कोई ऐसा है तो मुझसे बेधड़क कह डाल, कोई डर की बात नहीं है, मैं और किसीसे तेरा भेद न खोलूंगी। बस, उस कमबखत का नाम मुझसे कह दे, देख, सब काम ठीक हो जायगा।"

हुसेनी ने उत्तर दिया कि किसी विशेषपात्र में मेरी रुचि नहीं है। "जो चाहे मेरे पास आवे। अपना दिल खोल कर मुझसे कहदे, मैं और कुछ नहीं चाहती। कोई आवे, चाहे एक हो चाहे एक साथ दस हों"।

बुढ़िया बोली कि "बहुत से हों तो तू घबरा जायगी। तेरी उमर में, मुझे याद है, मैंने—पर अब उन बातों से क्या फायदा है! आ, चल देखें बादल का रङ्ग ढङ्ग कैसा है। अरे! फिर पानी बरसने चाहता है"।

बुढ़िया ने एक हाथ में एक कुबड़ी उठा ली और दूसरे हाथ से अपनी देह का भार हुसेनी की बांह पर डाल वह उस प्राचीन खंड़हर के चारों ओर टहलने लगी, और प्रत्येक स्थान को अपनी सङ्गिनी को ऐसी अच्छी भांति समझा कर बताने लगी कि कोई और मनुष्य यदि इस स्थान के भूगोल में परीक्षा देने चाहता और बुढ़िया उसकी मास्टर होती तो वह बड़ी उत्तमता से पास हो जाता; परन्तु हमारी हुसेनी बी को समझ में बुढ़िया के व्याख्यान का एक अक्षर भी न आया। वह इसका भेद नहीं समझ सकी कि इतने बड़े बड़े कमरों, लम्बे लम्बे दालानों और ऐसे भारी महल में किस प्रकार के मनुष्य रहते होंगे। भीतों की गहरी मोटाई को देख देख उसके अन्तःकरण में आश्चर्य, भय, और भक्ति का संचार होने लगा। इस कारण, जब जल बरसने के हेतु वे दोनों फिर बुढ़िया की कोठरी में घुस पड़े तो हुसेनी के मन की अवस्था कुछ निराली हो गई और वह बड़ी एकाग्रता से उस जीर्ण महल के पूर्वकालीन अधिवासियों के विषयों में, जिनका वर्णन बुढ़िया के मुख से उसने सुना था, विचार करने लगी। नवाब फ़ैज़ अलीख़ां के बागियों में मिल जाने के कारण, विद्रोह के समय, किस भांति इस महल में आग लगाई गई थी, और नवाब साहब किस भांति सपरिवार भागकर दक्षिण

निकल गए थे, फिर एक दिन अकस्मात् साहिबज़ादः नवाब बरकत अली खां, जिनका उसने शिशुकाल में लालन पालन किया था, किस भांति उसके सामने आ खड़े हुए, इत्यादि सब कथाएं हुसेनी ने बुढ़िया से सुनीं। साहिबज़ादः साहिब की प्रशंसा बुढ़िया एक मुख से नहीं कर सकती थी। उन्होंने फिर खँड़हर की भूमि और आस पास की कुछ ज़िमीदारी मोल लेली है और निश्चय कुछ दिनों में यहां वे फिर नए सिर से निवासस्थल निर्म्माण कर आ रहेंगे। हैदराबाद में वे एक उच्च-पद पर सुशोभित हैं, और ऐसे स्वरूपवान हैं कि उन्हें साक्षात् पर कटा हुआ परीज़ादः कहैं तो थोड़ा है। शौक़ीन भी उनसे बढ़कर कोई दूसरा न होगा, और बुढ़िया को तो बरकत अली खां के पितामह तक से परिचय था, शौक़ीन इनके घर भर में सब ही थे। इन सब कथाओं को हुसेनी पहिले तो बड़े आश्चर्य से सुनती रही, फिर बड़ी एकाग्र हो गई, और अन्त में कथा के आरम्भ से शेष तक सब समाचार गड़बड़ होकर, आकाश में भासमान चञ्चल मेघखण्डों के समान, उसके ज्ञानशून्य अंधेरे मस्तिष्क में कभी धीरे धीरे और कभी बड़े बेग से घुड़दौड़ करने लगे।

बुढ़िया जैसी कथा सुना रही थी, बिचारी भोली भाली किसान बाला को वह सब अनूठी जान पड़ती थी, और सब बातें भली भांति उसकी समझ में नहीं आती थीं। एक तो पूर्वरात्रि को उत्कण्ठा से उसके नेत्रों ने पलक नहीं मूंदे थे, तिसपर पथ के दारुण क्लेश, बुढ़िया की अनर्गल बकबक और नीरस सूखे भोजन ने भी, सम्भव है, कि उस समय उसकी बुद्धिवृत्ति को, उसीके समान, उचित मार्ग से भटका दिया होगा। और यद्यपि आज कल की कई नई नई छपी हुई रामायणों के समान बुढ़िया ने सातों कांडों की कथा सुनाकर एक अष्टम कांड का लग्गा लगा दिया, वह बिचारी हारी मांदी बारबार तन्द्रा से पीड़ित होने लगी, और केवल पर कटे हुए साहिबज़ादः, बड़े बड़े महल, और ऐश्वर्य्य की सामग्रियां उसके सम्मुख उड़ती हुई बादलों के समान एक दूसरे के पीछे आविर्भूत और अन्तर्हित होने लगीं। बीच बीच में वह "हां," "हां," "फिर क्या हुआ," इत्यादि वाक्यों से बुढ़िया का सम्भाषन करती और कभी कभी अपने शरीर को हिलाकर निद्रा के आवेग को दूर हटाने की चेष्टा करती। निदान जब बुढ़िया ने प्रेम के फुआरे की कथा छेड़ दी तो थोड़ी देर के लिये वह सचेत होकर फिर सुनने लगी।

बुढ़िया ने कहा कल सवेरे तुझे भी इस फुआरे से तीन घूंट पानी पिला दूंगी। कोई डर की बात नहीं है और अल्लाः ने चाहा तो दोही तीन दिन में तेरी मनोकामना पूरी हो जायगी। कल सवेरे इस पानी का पीना मत भूलिओ, और जो वह तुरन्त कुछ काम न कर जाय तो कुछ चिन्ता की बात नहीं है, क्योंकि मुझे याद है कि एक बार दो छोकड़ियों ने—और तब बुढ़िया ने एक और बड़ी भारी ओर छोर रहित कहानी छेड़ दी, जिसका फल यह हुआ कि हुसेनी बड़ी रात गए, आश्चर्य-मय घटनाओं से अपने मस्तिष्क को भर कर, एक चारपाई पर पड़ कर सोई।

[२]

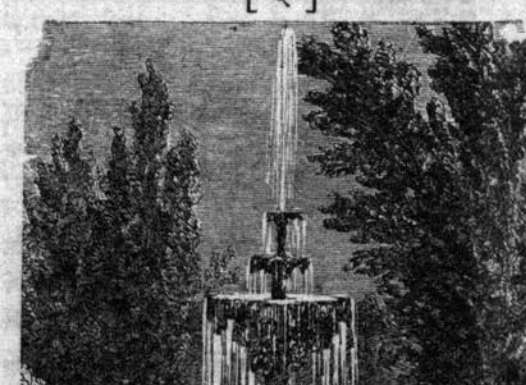

प्रेम का फुआरा

हुसेनी आप ही आप कहने लगी "अहा, आज का सवेरा कैसा भला मालूम पड़ता है और कैसी

ठंढी ठंढी हवा चल रही है। और इस फुहारे से कैसा साफ़ पानी निकल रहा है! पर बुढ़िया कल जो कह रही थी, उसपर मुझे विश्वास नहीं होता, पर हां, पानी के पीने में कुछ डर की बात नहीं है। अरे, ये तो बड़ा ही ठंढा और वैसा ही मीठा है। मेरे शरीर में तो इसके पीते ही मानो एक नया बल सा आगया।

अकस्मात् उस ठौर पर एक ओर से कई अश्वारोही घोड़े लपकाते हुए आ निकले। हुसेनी ओट में छिपने की चेष्टा अवश्य करने लगी, पर वे लोग इतनी शीघ्रता से आ पहुंचे कि उससे कुछ न बन पड़ा, और जब तक वह इसी विचार ही में थी कि किसी ओर चली जाऊं, कि एक रूपवान युवक, सुन्दर वस्त्र आभूषण पहिरे, कामदेव सा मनोहर वेष बनाए, घोड़े की पीठ पर से कूद पड़ा, और हुसेनी की ओर क्षणभर टकटकी बांध, उसे देख कर उसके सम्मुख आया और बड़ी नम्रता से नमस्कार कर कहने लगा कि "आप घबड़ाइए मत।"

हुसेनी ने झिड़क कर कहा, "रक्खो, मानो इन्हें देख कर मैं डर गई! हौआ हैं जो मुझे खा जायंगे! मैं तो इस लिये ठहर गई थी कि तुमलोगों में से कोई घोड़ा फँदाता हुआ मुझपर चढ़ा न आवे"।

युवा ने उत्तर दिया, "सुन्दरि! क्या यह भी सम्भव है कि कोई जीव तुम्हारा एक बाल तक बांका करने का उद्यम कर सके?"

हु—"अजी, इसकी न कहो। क्या कुछ ठिकाना है! मैंने तो समझा था कि तुम्हारे घोड़े मुझी पर आ टूटेंगे! पर हां, सच्ची बात तो यों है कि आज तक मैंने कभी किसीका कुछ नहीं बिगाड़ा; फिर कोई मुझको क्यों सतावेगा?"

यु—"कभी नहीं, कभी नहीं। तुम्हारी सरलता और भलमनसाहत तुम्हारे चन्द्रमुख पर आप झलक रही है। दया कर मुझे यह बतादो कि यहां पर अकेली खड़ी खड़ी तुम क्या रहीं थीं।"

हु—"मैं कहीं पर क्या करूं या न करूं, मेरी समझ में यह नहीं आती कि किसी दूसरे को उससे क्या? पर हां, टिकियापुर की सड़क मुझे बता दो, या अपने नौकरों में से किसीसे कह दो कि सड़क तक मुझे पहुंचादे, तो मैं तुम्हारा गुण मानूंगी। पर, खबरदार, एक बात तुम्हें जताए देती हूं। अपना मुंह संभालकर बोलो। चिकनी चुपड़ी बहुत सी वाहियात हमारे सामने मत बको।"

यु—"आश्चर्य! आश्चर्य! आपको खुसामद नहीं भाती!"—और वह युवा पुरुष एकाक्षी सुन्दरी के रूप और गुणों पर इतना मोहित हो गया कि उसने सब आगा पीछा छोड़ तुरन्त अपना शरीर, अपनी सारी धन सम्पदा हुसेनी के लङ्कड़े चरणों पर समर्पण कर दी। युवा का नाम नवाब बरकत अली खां था।

हुसेनी बोली—"मर निगोड़े! क्या पागल हो गया है!" परन्तु जब देखा कि यह पुरुष रूपी बाघ उसे काट नहीं खाता, तो दयावश हो लम्बी सांस लेकर बोली कि "कैसे दुःख की बात है! और यह ऐसा सुन्दर भी है!"

नवाब साहब बोले—"हा! तुम मेरी दशा देख कर दुखी होती हो! मुझपर दया करोगी! अच्छा, अच्छा, इस समय मैं और अधिक क्या आशा करूं? मैंने अपनेको भूलकर कुछ जल्दी कर दी है, इससे तुम घबरा गई हो। परन्तु अब मैं सावधान हो गया"। यों कह कर वह दो तीन बार अपने माथे को हाथ से बजाने लगा।

हुसेनी मन में कहने लगी, "अरे, यह अपना माथा क्यों पीट रहा है? पर, यह है बड़ा सुन्दर, और इसीसे इसपर मुझे अधिक दुःख होता है"।

नवाब साहब ने उसके मुखकी ओर देख कर बड़े विनय से धीरे धीरे कहा,—"समय पाकर और मेरी सेवा देखकर मुझपर कभी तो तुम कृपा करोगी! मैं तब तक अपने मन को रोके रहूंगा"।

हुसेनी यह सोच कि चलो थोड़ी देर इसीके मन की सी बातें करें, बोली "तुम्हारा मन

अपना ही है। उसका जो चाहे सो करो; पर हां, तुम्हारी दशा देख कर मुझे दुःख अवश्य होता है। पर तुमको चाहिए कि अपनी चाल सुधारो।"

नवाब साहब को इस उत्तर से बड़ी भारी आशा हो गई, और वे अपने मनको नहीं रोक सके, क्योंकि उनके ओठ सुन्दरी के मुख की ओर दौड़ चले और अपनी चाल का सुधारना वे सम्पूर्ण भूल गए।

परन्तु अपनी मनोरमा के बाहुबल का परिचय उनको नहीं था। उसी समय उन्हें एक ऐसा धक्का लगा कि बिचारे भूमि पर लोट पोट हो गए। इस दुर्घटना से उस मुग्ध युवा को क्रोध कुछ भी न हुआ, पर बड़ी आकुल दृष्टि से वे बीबी जी की ओर देखते रहे। एक क्षण भर के पीछे कुछ मनमें विचार कर वे उठ कर अपने संगिओं की ओर गए और उन्होंने उन लोगों को कुछ आज्ञा दी जिसका प्रतिपालन सब ने बड़ी शीघ्रता से किया। हुसेनी अपना वस्त्र संभाल दौड़ कर भागने ही पर थी कि नवाब के अनुचरों ने आकर उसे घेर लिया। उनमें से एक कुरूप भद्दा सा पुरुष एक ऊंचे घोड़े पर बैठा था, नवाब साहब ने बहुत विनय कर हुसेनी को उसके पीछे घोड़े की पीठ पर बैठा दिया। बिचारी ने जब देखा कि वह अकेली इतने पुरुषों के बीच में आ पड़ी है, और उनसे बचने का कोई उपाय नहीं है, तो विवस हो नवाब की प्रार्थना उसने स्वीकार की, परन्तु ज्योंही वह उस भद्दे पुरुष के पीछे घोड़े पर सवार हो गई, उसने उसके कान में कहा कि तुम्हारा मालिक पागल हो गया है, कोई ऐसा उपाय करो कि यहां से हम बच निकलें। मुझे टिकियापुर में मौसी के घर तक पहुंचा दो तो मेरे पास बहुत तो कुछ है नहीं, तुम्हें मैं दो आने पैसे मिठाई खाने के लिये दूंगी। क्यों, क्या कहते हो?

"मैं क्या कहता हूं?" उस मनुष्य ने अपने भयानक मुख को फाड़ बिकट रूप से मुसकरा हुसेनी की ओर देखा और कहा "मैं कहता हूं कि तुम्हारी आज्ञा हो तो तुम्हें लेकर मैं पृथ्वी के एक छोर से दूसरी छोर तक जहां कहो जा सकता हूं। कुछ पैसे कौड़ी का मुझे प्रयोजन नहीं है। क्योंकि मेरी बात सच मानो, तुमसे अधिक रूपवती स्त्री आजतक मैंने कहीं नहीं देखी है"—और फिर वह अपना विकराल मुख फाडकर इस रीति से मुसकराने लगा कि यदि काठी में उसका वस्त्र न अटक जाता तो हुसेनी नीचे कूद पड़ती।

वह सोचने लगी कि "आज अल्लाही खैर करे। मैं कैसे लोगों में आ फँसी हूं?" और वह कुछ भयभीत होकर चारो ओर देखने लगी। परन्तु भय का कोई विशेष चिन्ह उसने नहीं देख पाया। हां, वहां पर जितने लोग थे, सब सुध बुध खोकर उसीके मुख की ओर देख देख कर मग्न हो रहे थे। कभी किसी पुरुष ने उसका आदर नहीं किया था, और उसे देखते ही सब दृष्टि हटा लेते थे; परन्तु आज के सब मनुष्यों के इस नए भाव को देखकर वह चकित हो गई और सोचने लगी कि ये लोग जो प्रायः सब सुन्दर हैं, कदापि दुष्ट स्वभाव के नहीं हो सकते और इनसे मुझे कोई हानि की आशंका नहीं है। जब उसने अपने मन में यों ठान ली, तो पथ में कुछ देर तक उसे कुछ क्लेश का अनुभव नहीं हुआ। नवाब साहब सब समय उसके पास थे, और नाना भांति की कथाएं कहते जाते थे, और वह बीच बीच में पूछती थी कि टिकियापुर और कितनी दूर है।

इस भांति चलते चलते वे लोग एक बहुत बड़े गृह के सामने आ पहुंचे, और सबके सब उसके आंगन में अपने घोड़ों पर बैठे हुए घुस गए। तब नवाब साहब ने हुसेनी से कहा कि उनकी यात्रा शेष हो गई और बड़े आदर तथा स्नेह से उसको घोड़े पर से उतरवाया।

वहां पर बहुत से लोग हाथ बांधे आज्ञा पाने की अपेक्षा कर रहे थे। एक बुढ़िया नवाब साहब के सामने आकर खड़ी हुई। उसे देखकर नवाब साहब ने आज्ञा दी कि "रङ्गीली बी, मेरा एक

कहना माना। इस सुन्दरी के किसी भांति की क्लेश न होने पावे यह तुम आप देखते रहना, और जिस वस्तु की इन्हें आवश्यकता हो वह तुरन्त मंगवा देना"।

रङ्गीली बी ने बड़े विनय से कहा "आओ, बीबी, इधर आओ," और फिर वह कई बड़े बड़े और अच्छी तरह सजे हुए कोठों में से होकर उसे एक स्थान में लेगई। परन्तु वहां की सजावट और धूमधाम के देखकर हुसेनी बी की बुद्धि फिर चकराने लगी, और खंड़हर की बुढ़िया ने जो महलों और अट्टालिकाओं की कथा सुनाई थी, उसका स्मरण उसे हो आया। जिस कमरे में वह आई थी, उसमें चारो ओर गलीचे बिछे थे, मखमल और रेशम के पर्दे लटक रहे थे, और नाना भांति की बहुमूल्य वस्तुओं से वह ऐसा सजाया हुआ था, कि एक एक वस्तु के देख देख कर वह चकित हो रही थी। संगिनी ने उसे वहां पर विश्राम करने को कहा, तो हुसेनी बोल उठी—

"अस्मा, खुदा तेरा भला करे! मैं कहां आई? मेरे लिये यह भवन नहीं है। मैं तो एक गरीब किसान की बेटी हूं। मूझे भूख बहुत लग रही है, इसलिये तुमसे रूखा सूखा जो कुछ होसके मुझे ला दो कि खाकर मैं तुरन्त टिकियापुर की राह लूं"।

रङ्गीली ने उत्तर दिया कि टिकियापुर वहां से बहुत दूर है, और उससे हुसेनी को ज्ञात हुआ कि वह उस नवाब साहब के नए महलों में विराजमान थी।

हुसेनी हताश होकर मखमल से मढ़ी हुई एक कुर्सी पर बैठ गई और बोल उठी कि "तुम्हारे नवाब ने मुझे बड़ा धोखा दिया है। मैं समझती थी कि वह मुझे टिकियापुर में मेरी मौसी के घर पहुंचा देंगे; वह पागल होगए हैं, है न?"

रङ्गीली ने उत्तर दिया "मुझे भी ऐसाही जान पड़ता है। युवा मनुष्य कैसी कैसी धोखाधड़ी करते हैं मैं भली भांति जानती हूं, और इसका भी कुछ ठिकाना नहीं कि वे कब किस ओर झुक पड़ें। युवाओं की रुचि भी समय समय पर बड़ी बिचित्र होती है। आज की बात तो मेरी समझही में नहीं आती।

हु—"मैं यहां नहीं रहूंगी, यह मैंने स्थिर कर लिया है"।

रङ्गीली ने कहा कि "हां, यह बहुत उचित बात है", और तब दोनों स्त्रियां हुसेनी के भाग जाने के उपाय सोचने लगीं। अन्त में यह निश्चय हुआ कि इस काम में बुढ़िया के पुत्र करीमबख़्श की सहायता ली जाय। बुढ़िया उसे लोगों की दृष्टि से बचा कर अपनी कोठरी में ले गई और थोड़ी ही देर में करीमबख़्श, जो नवाब के यहां नौकर था, वहां आया और जब उसने सारी कहानी सुनी तो कहने लगा कि "आपपर बड़ा अन्याय हुआ है। आप निश्चय जानिए कि मैं आपको टिकियापुर ले चलूंगा। और अस्मा, तू अस्तबल को चली जा और भोंदू से कह दे कि लाल घोड़ी और वह टट्टुआ चुपचाप कसकर बाहर ले जाय। और जिस समय नव्वाब साहब खाने खांयगे, किसीको पता तक न चलेगा, बीबी को लेकर मैं लम्बा हो जाऊंगा। बस, अब साहस का काम है"। परन्तु ज्यों ही उसकी मा बाहर चली गई, उसका भाव सम्पूर्ण बदल गया, और वह बड़ी नम्रता से अपने हृदय पर हाथ रख कर, हुसेनी की ओर झुक कर बोला "प्यारी, तेरे लिये मैं जो न करूं सो थोड़ा है। टिकियापुर तक ही मैं तेरा साथ नहीं दूंगा। सारे जीवन के मार्ग में मैं तेरा गुलाम बना रहूंगा"।

हु—"क्या मैं उमर भर घोड़े पर सवार होकर बैठी रहुंगी? नहीं, नहीं, मुझे टिकियापुर ही तक पहुंचा दो, मैं अधिक और कुछ नहीं चाहती। पर तुम तनिक हट कर खड़े हो जाओ और भले आदमियों की तरह बात चीत करो। क्योंकि—"

वह आगे और कुछ नहीं बोलने पाई कि एकाएक किवाड़ खुल गए और एक महापुरुष

का आविर्भाव हुआ, जिनका पेट महा मोटा और सिर महा छोटा सा था। यह पुरुष जो साक्षात् भैंसासुर के अवतार थे, हुसेनी को देखते ही जहां खड़ा थे वहीं जम गए। और हमको ठीक स्मरण नहीं है कि अपनी एकाग्रता से उसे यह भी जान पड़ा हो कि करीमबख़्श वहां उपस्थित था कि नहीं। परन्तु उसे देखते ही वह युवा हट गया और भयभीत हो-कर कोठरी के बाहर निकल गया। हुसेनी ने समझा कि यह नवाब के बाप बूढ़े नवाब होंगे, इसलिये बड़े आदर से उठ कर उसने सलाम किया और विचारा कि कोई आश्चर्य नहीं कि "मेरे समान जीव को यहां देख कर ये चकित हो गए हों। मुझे निश्चय होता है कि मेरे टिकियापुर पहुंचने का प्रबन्ध ये करा देंगे, क्योंकि मेरा यहां पर ठहरना इनको अच्छा न लगेगा"।

"ओः! सुन्दरी, हूरी, परी, साक्षात् आकाश से उतरी हुई अप्सरा!"—वह महाविशाल देह-धारी बोलने लगा। बोलते समय इतना झुक झुक कर सलाम कर रहा था कि देख कर भय होता था कि एक ओर उलार पाकर शरीर के बोझ से कहीं गिर न पड़े। वह बोला—

"बीबी, कोई घबराने की बात नहीं है। अहा! बड़ी भूल हुई।—उः! नवाब साहब की इच्छा है—ओः! ओः!—आप बैठ जाइए।—घबराइए मत!—उः!—उः!—मैं क्या कहूं?—मैं क्या करूं?—अपने जीवन भर में मेरी ऐसी दशा कभी नहीं हुई थी।—ओः! आप मुझे कभी क्षमा नहीं करेंगी"।

हु—"हां, मेरा भी जी ऐसाही चाहता है। पर कुछ बात नहीं। मैं तुम्हारे सब अपराध क्षमा कर दूंगी, यदि तुम मुझे अपने बेटे के चंगुल से बचा दो"।

लम्बोदर ने पूछा—"मेरा बेटा? एं! आपने कैसे जाना कि मेरे एक बेटा है? और वह! वह पिल्ला! उसने इतना बड़ा साहस किया है? वह ऐसा पापी हो गया है मैं नहीं जानता था"।

हु—"तुम नहीं जानते थे? तो फिर तुम्हें उचित है कि उसपर तीव्र दृष्टि रक्खो। और देखो, आज सवेरे उसने मेरे साथ जो खिलवाड़ किया है वैसा वह फिर न करने पावे। पहिले तो उसने मुझे दुनिया भर की बकवाद सुनाई। फिर बड़ा भारी धोखा दिया और मुझे घोड़े पर लाद कोसों दौड़ा लाया जिससे मेरा सारा शरीर दुखने लगा है"।

हुसेनी की कथा सुन उसके सम्मुख उस विशाल गोलाकार मुखमण्डल में से दो गोल गोल आंखें फटकर बाहर निकली आती थीं और उस मांस-पिण्ड में लपेटा हुआ मन तो मानो अंधेरे में लुप्त हो गया था। क्योंकि गाल दोनो और भी फूल आए थे और इस अनुपम शरीर का अधिकारी ऐसे वेग से सांस ले रहा था मानो लोहार धौंकनी से आग सुलगा रहा हो।

हुसेनी फिर बोलने लगी कि "जो होनी थी सो तो हो ही गई, अब उस बात पर रोष करने से कुछ लाभ नहीं है। परन्तु यदि आप मुझे टिकियापुर तक ले चलें तो"—

"क्या मैं?" वह स्थूलरूप बोल उठा—"क्या मैं अपनेको ऐसा बड़भागी समझ सकता हूं कि आपके काम आऊं?"

हु—"क्यों नहीं? हानि क्या है? मैं आपका बड़ा गुण मानूंगी"।

स्थूलरूप ने हांफकर कहा—"ओः! मैं आज आनन्द के मारे फूला नहीं समाता हूं"—और झट कुर्सी को पकड़ उसके सहारे से भूमि पर बैठ हुसेनी के चरणों में दण्डवत करने लगा। परन्तु वह ऐसी शीघ्रता से कुर्सी को खींचकर अलग खड़ी होगई कि वह विचारा चारो हाथ पैर फैला कर पेट के बल लोट पोट हो गया। परन्तु कुछ दम लेकर फिर उठ बैठने की चेष्टा कर रहा था कि इतने में रङ्गीली बी वहां आ पहुँची और विस्मित होकर बोल उठी कि 'हैं, हैं, मीर साहब को यह क्या हुआ?"

हुसेनी ने कहा "मैं समझती हूं कि बूढ़े बाबा अकस्मात् बीमार हो गए हैं"।

परन्तु रोगी मनही मन गुनगुनाने लगा "बलिहारी! बलिहारी तेरी बुद्धि को! तू साक्षात् स्वर्ग की अप्सरा ही है!"

रङ्गीली जानती थी कि अकेली उसे पकड़ कर वह नहीं उठा सकती थी। इसलिये वह ऐसी चिल्लाई कि वहां पर बहुत से लोग आ पहुंचे। क्योंकि मीरसाहब नवाब साहब के सब नौकरों के सर्दार थे, और उनकी बड़ी प्रतिष्ठा थी। नवाब साहब ने उन्हें हुसेनी को अपने पास लिवालाने के लिये भेजा था, परन्तु अब तक वह अपना समाचार नहीं कह पाए थे। जब लोगों ने चारों ओर से पकड़ कर उन्हें फिर खड़ा किया, और कुछ स्वांस लेकर वे ठंढे हुए, तो हुसेनी के पास ही एक तखत पर बैठ गए, और किसी भांति उसका एक हाथ पाकर उन्होंने उसे पकड़ लिया और बड़े आन्तरिक दुःख से उसमें एक चिकोटी काटली। फिर बोले "आः! अब मैं बहुत अच्छा हूं। ओः। न जाने मुझे क्या हो गया था! चलो कोई बात नहीं! अब सब लोग बाहर चले जाओ। मुझे बीबी साहिबा से एक विशेष समाचार कहना है"। सब नौकर तुरन्त चले गए, पर रङ्गीलो वहीं खड़ी रही और हुसेनी के कान में बोली कि दोनों घोड़े पलभर में तैयार हो जांयगे, और प्रकाश में कहा कि "आओ, चलो, हमलोग खाना खा आवें"।

परन्तु इस प्रस्ताव को सुनते ही मीर साहब निराश सागर में मग्न हो गए, और रङ्गीली की असभ्यता को देख उन्हें बड़ा खेद हुआ। परन्तु जब दोनों स्त्रियां सचमुच जाने लगीं तो उन्होंने झटपट नवाब साहब का संदेसा कह सुनाया, जिसे सुनकर हुसेनी ने झिड़क कर कहा—"चल मुए, तेरे नवाब की नवाबी में आग लगे। मैं अब उसके पंजे में नहीं फँसने की और तुझसे भी मैं अब कोई उपकार नहीं चाहती। योंही बैठा बैठा भर्र भों किया कर"।

मीर साहब ने बड़े खेद से कहा, अरी! बड़ी निर्दयी है। मेरा कलेजा जला दिया!"

परन्तु कलेजा चाहे जल कर भस्म हो गया हो, उसपर हुसेनी ने कुछ विचार न किया, और ज्यों ही कि झट पट किवाड़ खोल कर बाहर जाने लगी कि वहां पर नवाब साहब स्वयं आ पहुंचे, और उन्होंने रङ्गीली बीबी पर धमकी की झड़ी लगा दी कि ऐसी माननीया सुन्दरी को इस मैली कोठरी में क्यों ठहराया है। महल भर में सबसे उत्तम कमरा इनके लिये खाली करा देना उचित है। तब उन्होंने हुसेनी से क्षमा मांगी, और बड़े विनय से कोर्निश कर, उसका हाथ पकड़ उसे कोठरी से बाहर ले गए। परन्तु हुसेनी को तो अब भाग जाने की चिन्ता लग रही थी, इस कारण अपना उपाय प्रकाशित न हो जाय इसलिये विवश हो नवाब साहब के साथ साथ चली गई। वे उसे एक सुसज्जित बैठक में लिवा ले गए, जहां और भी छ पुरुष बढ़िया बढ़िया वस्त्र पहिरे बैठे हुए थे। इन दोनों के वहां पहुंचते ही सबके सब उठ खड़े हुए और मानो कोई राज्यकन्या का सम्मान करता हो, इस भांति झुक झुक कर उसे अभिवादन करने लगे। हुसेनी को छोड़ कोई और स्त्री वहां पर नहीं थी, परन्तु वे सबके सब सप्तर्षियों के समान उसके मुखचन्द्र की रूपसुधा पान करने लगे। वह जो कुछ कहती थी उसीपर वाह वाह की ध्वनि होने लगती। सब लोग उसके शील स्वभाव और विशेष कर उसके निर्दोष रूप की प्रशंसा मुक्तकण्ठ से करने लगे। एक युवा उसके ग्रामीण वस्त्रों ही को सराहने लगा, और बोला कि आपका स्वभाव इतना सादा है कि अभिमान आपको छू तक नहीं गया, और केवल कुरूपा स्त्री ही अपने अङ्ग की शोभा बढ़ाने के लिये वस्त्र आभूषण पर अधिक ध्यान दिया करती हैं। स्वभाव सुन्दरी की सादेपन ही में अधिक शोभा होती है। एक दूसरे पुरुष ने उस के उदार स्वभाव पर मुग्ध होकर व्याख्यान दिया। निदान चारों ओर से उसकी इतनी बड़ाइयां होने

लगीं कि सुनते सुनते वह इस विचार में पड़ गई कि "क्या ये सब झूट मूट बक रहे हैं ? कौन जाने, मैं वास्तविक ही ऐसी रूपवती होउंगी ! इन लोगों के झूठ बोलने का कोई प्रयोजन मुझे नहीं देख पड़ता, क्योंकि ये सब अच्छे वंश के जान पड़ते हैं"।

इतने में नवाब साहब उसे एक खिड़की के पास लेजाकर वहां से नीचे की फुलवाड़ी की शोभा दिखाने लगे। फुलवाड़ी पत्रपुष्पों से सुशोभित थी और नाना भांति के पुष्पों की भीनी भीनी सुगन्ध वहां तक आ रही थी, जिसकी बास पाते ही हुसेनी का मन भी उमङ्ग से भरगया। इतने में बातों ही बात में सुअवसर पाकर नवाब साहब ने हुसेनी से अपने बिवाह की कथा छेड़ दी। परन्तु हुसेनी ने एक लम्बी सांस भर कर कहा कि "मैं तुम्हारे योग्य नहीं हूं, और जो होऊं भी तो बिना पिता की आज्ञा के इस विषय में मैं आप कुछ नहीं कह सकती"।

नवाब साहब तो मारे हर्ष के गदगद हो गए और कहने लगे कि "मैं स्वयं उनकी आज्ञा ले आऊंगा। अभी सवार होकर जाता हूं और भोजन के समय तक उन्हें यहां ले आउंगा। महल में एक मुल्ला भी इस समय उपस्थित हैं, फिर आज ही रात को निकाह पढ़ जायगी"।

हुसेनी बोली कि "मैं मानो एक मिट्टी का खिलौना ठहरी, लोग समझते हैं कि मांगते देर नहीं कि उनके हाथ लग जाउंगी"।

नवाब ने कहा कि "इस खिलौने को मैं बड़े यत्न से अपने हृदय से लगा कर रक्खुंगा"—और तब अपनी इस प्रतिज्ञा को कार्य द्वारा सिद्ध कर दिखाने ही को थे कि हुसेनी ने एक झटके से उनका हाथ हटा दिया और एक ऐसी ठोकर मारी कि कभी किसी पुरुष ने स्त्री से ऐसी ठोकर न खाई होगी।

यह देख वहां पर उपस्थित लोगों में से एक भद्र पुरुष ने कहा "यहां पर बड़ा अन्याय होने लगा है। अजी नवाब साहब, आप क्या आपेको भूल गए हैं ? एक सुन्दरी स्त्री का ऐसी अपमान हो और कोई भला आदमी खड़ा खड़ा देखता रहे यह असम्भव है। बस, आप इनको मत छेड़िए, नहीं तो इनकी रक्षा के लिये मुझे आप से भी बैर करना पड़ेगा। बीबी साहिबा, आप डरिए मत, आपके लिये मैं अपनी जान देने पर तैयार हूं"।

नवाब साहब सुनते ही आग बबूला हो गए और बोल उठे "बस, सूबेदार साहब, बस, आगे मुंह सँभाल कर बोलिए, नहीं तो अच्छा न होगा"।

अब तो वाक्युद्ध से हाथाबांही की नैाबत आगई और लड़ने के लिये अपनी अपनी कमर बांध दोनों मनुष्य बाहर मैदान में निकल गए और उनके पीछे पीछे और लोग भी चले गए। केवल एक लम्बा दुबला पतला सा मनुष्य जो एक काला कोट पहिरे हुए था, नहीं गया, और कमरा सूना पाकर वह सीधा हुसेनी के सम्मुख चला आया। और एक बार खांस कर बड़ी अधीनता से उसके मुख की ओर निहारता रहा।

हुसेनी ने पूछा—"अब, तुम्हें क्या होगया है ? जान पड़ता है जैसे तुम्हारा पेट दुख रहा हो"।

पुरुष—"तुम्हारी प्यारी चितवन ने सब दुख-दर्द दूर कर दिया है। अरी प्यारी, मैंने बहुत क्लेश उठाए हैं। नव्वाब साहब मेरे मुरब्बी हैं; मैं उनका अकृतज्ञ नहीं होना चाहता; परन्तु—परन्तु—मुझे पुर्ण विश्वास है कि तुम्हारे समान बुद्धिमती स्त्री, साक्षात्—साक्षात्—ओः—मैं क्या हूं ! मैं बारिष्टर हूं और बोलने में मैं कभी नहीं चूकता,—परन्तु इस समय मेरी सब बुद्धि भ्रष्ट होगई है। अपने मन की बात को मैं ठीक ठीक नहीं कह सकता। मेरा यह आशय है कि न नवाब साहब और न वह झक्खड़ सूबेदार, दोनो में से कोई भी तुम्हारे योग्य—ह्ँहः—! अर्थात्, मैं विचारता हूं कि स्वच्छन्द और शान्तिमय जीवन और एक निर्द्वन्द सेवक, सम्भव है कि ये आपको यथार्थ सुख दे सकें।

हु—"हां, हां, ठीक है। मैं भी शान्तिमय जीवन चाहती हूँ, पर वह मिले कहां ?"

वारिष्टर—"यहां देखिए ! इस दास पर कृपा दृष्टि रखिए, आप जो चाहती हैं सब आ पहुंचेंगे। इस हृदय ने पहिले कभी सौन्दर्य के हाथ आत्म-समर्पण नहीं किया था। अब तक मैं धन ही की खोज में अपने दिन बिताता था, परन्तु एक बार यह अमूल्य धन मेरे हाथ लग जाय तो सब कानून पलटा खा जायगा। तुम्हारी दृष्टि में कुछ ऐसी मोहिनी शक्ति है कि—"

हु—"अहा ! अब मैं समझी ! या अल्लाः ! सबेरे मैंने जो जल पिया था, यह सब उसीका उपद्रव है। हट जा मेरी सामने से। एक ऐसा घूंसा जमाउंगी कि सब कानून भूल जायगा ! चल ! हट !!"—यह कह वह वहां से उछलती हुई रङ्गीली बी की कोठरी में दौड़ गई और उससे बड़े विनय से कहने लगी कि "मैंने सुना है कि यहां एक धर्मात्मा मुल्ला साहब उपस्थित हैं। मुझे उनके पास ले चल, धर्म्म की सहायता लेने से फिर कोई मुझे नहीं सताएगा। और मुल्ला जी झाड़ फूंक देंगे तो सब पानी का फसाद भी दूर हो जायगा"।

रङ्गीली—बेटी तू क्या बक रही है ? पानी का कैसा फसाद ? इतनी घबराई क्यों है ? चल तुझे मुल्ला ही के पास ले चलूं। पर तेरा हृदय बड़ा बलवान् है। सबकी बहू बेटी ऐसी होतीं तो क्या कहना था। भगवान तेरा भला करे, चल आ"।

उस समय मुल्ला जी अपनी जगह पर नहीं थे, इसलिये थोड़ी देर उसे वहां ठहरना पड़ा। सामने एक शीशा टङ्गा था। वह उसमें अपना स्वरूप देखने लगी कि कुछ विशेष परिवर्त्तन ऐसा क्या हो गया है कि जिसके देखते हां सब पुरुष उन्मत्त हो जाते हैं। पूरे पांच मिनट तक उसने अपने रूप की परीक्षा ली, पर उसे कुछ भी अन्तर न देख पड़ा; अपना मुख वह जैसा पहिले देखती थी अब भी उसने ठीक वैसाही देखा।

इतने में धीरे धीरे द्वार खुले और लम्बी श्वेत दाढ़ी से शोभित एक धार्मिक महात्मा की मूर्त्ति उसके सन्मुख आ खड़ी हुई और बड़ी एकाग्रता से टकटकी बान्धे चुपचाप उसकी ओर देखने लगी।

"अरे ! शाह असग़र अली साहब ! आप यहां कहां से आए ? आपको देख कर मेरे धड़ में प्राण लौट आए ! क्या आपने मुझे नहीं पहिचाना ?"

धार्मिक मौलाना साहब ने कुछ घबरा कर कहा—"भगवान् ! कोई भूल हो गई है। जो एक बार भी अपने सौभाग्य से मैंने आपके दर्शन पाए होते तो सम्भव नहीं कि मैं आपको भूल जाता"।

हु—"नहीं ! मैं तो नहीं भूली हूं। हां जब से आपने जालिमगंज छोड़ दिया, मैं तब से बड़ी अवश्य हो गई हूं।

आपने कितनी बार मुझे अपनी गोद में बैठा कर खिलाया था। परन्तु अब आप मुझे नहीं उठा सकेंगे। आइए बैठ जाइए। और आज मुझपर जो कुछ बीती है मैं सब आपको सुनाती हूं। मैंने और तो कुछ नहीं किया है, केवल तीन घूंट जल अवश्य पिया है। पर जल पीने से क्या हानि हो सकती है, मेरी समझ में नहीं आता। आप कृपाकर मुझे बताइए कि मैं क्या करूं। आप तो मुझे बहुत लाड़ प्यार किया करते थे, और मेरी पीठ पर मुक्कियां मार कर हंसते और कहा करते थे कि मैं बिटिया कैसे होगई, क्योंकि मुझमें छोकड़ों के सब गुण वर्त्तमान थे"।

शाह साहब बिस्मित होकर पूछने लगे "क्या यह भी सम्भव है ?"

"वाह शाह साहब, आप सब भूल गए ? यह लीजिए, मेरी ओर फिर भली भांति देख लीजिए। देखिए, मैं आपकी वही पुरानी खेल की सँगिनी हुसेनी हूं।"

उस भलेमानुस ने बड़े आश्चर्य से अपनी आंखें फाड़ कर और हाथ उठा कर कहा "हैं !! क्या यह ठीक है ?"

हुसेनी ने पहिले अपनी सब कथा समझाकर कही और फिर कहा, "शाह साहब, मैं अब आप ही के शरण आई, और मुझे आशा है कि यहां से आप मुझको कहीं और ले चलेंगे। आप मुझे जहां लिवा ले जाइएगा, मैं आपके साथ बेखटके चली चलूंगी, परन्तु यहां के भयानक लोगों के बीच क्षण भर भी रहना मैं नहीं चाहती"।

शाह साहब ने उत्तर दिया कि "जहां कहोगी मैं आपके साथ साथ चला चलूंगा, और आपका रक्षक बनूंगा। परन्तु रङ्गीली बी के साथ इस समय आप थोड़ी देर के लिये दूसरी जगह चली जांय तो अच्छा हो, क्योंकि यहां भी कोई आकर आपको छेड़ सकता है। मैं तब तक यहां से चलने का प्रबन्ध कर आऊं"।

निदान हुसेनी किसी एकान्त ठौर में जा बैठी, और बड़ी उत्कण्ठा से शाह साहब की बाट देखती रही, क्योंकि हुसेनी के यहां रहने के कारण उस गृह में जो जो आश्चर्य घटनाएं उस समय हो रही थीं, रङ्गीली बीच बीच में आकर उसे वे सब समाचार कह जाती थी।

ऐसा जान पड़ा कि नवाब साहब ने सूबेदार को छुरी से घायल कर दिया, और जिस समय कि वे इस उचित कार्य में तत्पर थे, एक चपरासी, जो कि इस मनमोहिनी स्त्री के रूपराशि का दर्शनाभिलाषी था, बैठक के कमरे में धीरे धीरे झांकने लगा और प्रेमपीड़ित बारिस्टर साहब की सब कीर्त्ति को भली भांति देख कर उसने चट जाकर अपने स्वामी से उनकी सब कथा कह सुनाई। नवाब साहब एक शत्रु पर अभी विजय पा चुके थे, परन्तु दूसरे का आविर्भाव सुन तुरन्त दौड़ते हुए बैठक में चले आए, और देखा कि न्यायालय के वागदेव हुसेनी के अकस्मात् अन्तर्धान से विस्मित् होकर अब तक पूर्ववत् हाथ जोड़े ध्यानस्थ बैठे हैं। बस, बिना कुछ आगा पीछा विचारे अग्नि के साक्षात् अवतार नवाब साहब ने उनको पीठ पर एक लात जमाई और कई एक मधुर नामों से पुकार कर उनका आदर सम्भाषण किया। यह बात इतनी शीघ्र हो गई कि बारिस्टर महाशय को पीनलकोड के दण्ड विधि के स्मरण करने का समय न मिला और वे भूमि पर लेट गए। परन्तु तुरन्त वे अपने शरीर को झाड़ कर उठ खड़े हुए और न्यायालय की सहायता लेने की अपेक्षा न कर नवाब साहब के मुख पर एक ऐसा घूंसा उन्होंने जमाया कि उनकी नासिका से रक्तपात होने लगा। यद्यपि नवाब साहब के पतन से उनको कुछ थोड़ा सा सन्तोष हुआ, परन्तु फिर हुसेनी के मनभावन प्रेमालाप का स्मरण होते ही कलेजा दहल उठा और वे उस भांति कुछ बड़बड़ाने लगे जैसे कहानी की लोमड़ी ने एक बार कहा था कि अंगूर खट्टे होने के कारण वे उसके हाथ नहीं लगे थे। पास के किसी पुरुष ने उनकी बड़ बड़ सुन ली और उस पर एक ऐसे ठहाके की हंसी उड़ाई कि उसके साथ तुरन्त गजकच्छप का युद्ध आरम्भ हो गया, और बारस्टर साहब हाइकोर्ट में जिस हाथ को अधिक हिलाया करते थे, उसमें एक बड़ी भारी चोट आगई।

इधर नीचे के खन में भी बड़ी बक झक हो गई थी। मीर साहब ने रङ्गीली के पुत्र करीमबख़्श की कथा सुनली और वे उसे कुत्ते का पिल्ला कह कर गाली देने लगे। और करीमबख़्श ने अपना पिल्लापन स्वीकार करने के बदले मीर साहब को बुड्ढे बन्दर की उपाधि दी। और महल की सब स्त्रियां पुरुषों को मनमानी गालियां देने लगीं और कहने लगीं कि यह आज हो क्या गया है कि एक कानी गंवार लुगाई के पीछे छोटे बड़े सब बावले बन गए हैं। परन्तु आश्चर्य की बात है कि जिस कानी लुगाई को पुरुष लोग स्वर्ग की अप्सरा समझ रहे थे, उसमें स्त्रियों ने सौन्दर्य्य का एक तिल भी नहीं देख पाया। यह निश्चय उन स्त्रियों में स्वाभाविक ईर्षा का प्रतिपादक है।

निदान एक गुप्तद्वार से होकर शाह साहब और हुसेनी महल से भाग चले, और दो टट्टुओं

पर बैठकर धीरे धीरे चुपचाप जाने लगे। वे कोई कोस भर निकल गए होंगे, तब हुसेनी ने उस दिन की घटनाओं को और सब लोगों के आपस में लड़ाई दंगे को सोच कर बड़ा खेद प्रकाश किया।

शाह साहब ने उत्तर दिया कि "इसमें आपका कुछ दोष नहीं। जब स्त्रियां अत्यन्त रूपवती होती हैं तो ऐसा ही हो जाता है। और तब मनुष्य यह नहीं जानते हैं कि वे क्या कर रहे हैं"।

हु—"लो! शाह साहब! आज की घटना से और उस बात से क्या सम्बन्ध है? यह निश्चय है कि मैं सुन्दरी नहीं हूं। नहीं तो हमारे गांव के आस पास में कोई न कोई इतने दिन इस बात को अवश्य जान जाता। आप ही तो मुझसे कहा करते थे कि मुझे स्त्री के बदले पुरुष होना उचित था। कुछ दिनों से मेरे भी मन में यही बात जम गई थी। और जब कोई मुझे व्याहने नहीं चाहता था तो मैं सोचा करती कि मैं पुरुषों के वस्त्र पहिरा करूं तो अच्छा, और उसी ओर अपने भाग्य की परीक्षा कर लूं कि कोई स्त्री भी पुरुष जान मुझे चाहती है वा नहीं"।

शा—"आज कल जालिमगंज में निरे गधे ही रहते होंगे कि ऐसी परी के समान रूपवती का आदर नहीं होता"।

तब फिर वे लोग चुपचाप चलने लगे। जब कुछ दूर निकल गए तो हुसेनी बोल उठी—"हैं, यह तो वही राह है जिधर होकर मैं सबेरे आई थी। हां! सचमुच उस बुढ़िया के टूटे खँड़हर की चोटी पेड़ों के झुण्ड में से मुझे देख पड़ती है। मुझे जान पड़ता है कि आज रात को भी टिकिया-पुर नहीं जा सकूंगी।—पर, खुदा ख़ैर करे! शाह साहब! आपको क्या होगया है? आपका शरीर तो अच्छा है?"

शाह—"नहीं! बहुत अच्छा नहीं है। मेरे हृदय में कुछ घबराहट सी जान पड़ती है और मेरे सिर में कुछ चक्कर सा आ रहा है"।

हु—"मुझसे कुछ सेवा हो सके तो आज्ञा दीजिए"।

शा—"सुन्दरी! जो आप मुझे अपनी मीठी बोली थोड़ी देर और सुनाती रहें तो सम्भव है कि मेरा चित्त ठिकाने आजावे"।

हु०—"बहुत अच्छा। यदि बोलने ही से आप नीरोग हो जांय तो क्या हानि है। पर कौनसे विषय पर बोलूं"।

शा—"विषय कोई हो। आप केवल कृपा करके बोलती रहें"।

हु—"कृपा करके बोलती रहूं! क्या आप सरीखे वृद्ध से मैं दूसरी रीति से भी बोल सकती हूं?"

शा—"नहीं, नहीं, मैं बहुत बुड्ढा नहीं हूं। ऐसा न कहिए।"

हु—"अच्छा, तो मैं नहीं कहूंगी; क्योंकि यदि सम्भव हो तो मैं आपको निश्चय आनन्दित करूं। और सच तो यों है कि आप कुछ बहुत बुड्ढे भी नहीं है। लड़कपन में भी मैं आपको ठीक ऐसा ही देखती थी। मेरे अब्बा कहा करते थे कि—"

शा—"जाने दो, प्यारी! अब उस बात को छोड़ दो"।

हु—"अच्छा, बाबा, तब मैं उस विषय में आपसे कुछ नहीं कहूंगी, यद्यपि मेरी समझ में यह नहीं आती कि जब आप स्वस्थ और बलवान हैं तो वयस क्या कर सकता है"।

शाह साहब ने आनन्दित हो कर पूछा—"क्या आप सच मुच ऐसा ही विचारती हैं?"

हु—"हां, हां, क्यों नहीं? कोई मनुष्य एक बार आपके मुख की ओर देख कर यह कह सकता है" और यह विचार कर कि वृद्ध को स्वरूपवान कहने से वह आनन्दित हो रहा था, हुसेनी बुढ़िया के घर पहुंचने के समय तक बारम्बर उसकी प्रशंसा करती रही।

बुढ़िया गृह में नहीं थी, परन्तु शाह साहब ने कहा कि वे बुढ़िया को पहिचानते हैं, और यदि वहां विश्राम न करें और योंही चले जांय तो वह बड़ी दुखी होगी। इस कारण वह वहां नहीं है तो क्या, एक दिन ठहर जाना ही अच्छा है। और

हुसेनी से कहा कि बुढ़िया की अनुपस्थिति में आप यहां पर मेरे ही पाहुन हो जाइए, और मैं भरसक आपकी सेवा करूंगा। जब हुसेनी रोटी बनाने को जाने लगी तो शाह साहब ने बड़े विनय से कहा कि आप वृथा परिश्रम न करें। देखिए, मैं ही बात की बात में खाना पका लाता हूं। और यद्यपि हुसेनी यह बात नहीं स्वीकार करती थी, पर वृद्ध ने उसे रोक कर देखते देखते भोजन बना कर ला रक्खा।

वे दोनों एक ही साथ भोजन करने बैठे, और शाह साहब उस समय हुसेनी का इतना यत्न करने लगे कि वह उकता गई। भोजन के अनन्तर हुसेनी बी ने शाह साहब को उनके पुराने अभ्यास का याद दिला कर कहा कि आपको पहिले भोजन के उपरान्त तनिक सोने का अभ्यास था। आप मेरे लिये अधिक क्लेश न उठावें, थोड़ी देर आराम कर लीजिए। परन्तु जब शाह साहब ने नहीं माना, और हुसेनी के पास बैठ कर उसकी बचनसुधा ही पान करने की अभिलाषा प्रकट करने लगे तो हुसेनी ने समझा दिया कि टिकियापुर जाते समय भी वह शाह साहब को अपने संग ले जायगी और इस यात्रा के पहिले विश्राम करना आवश्यक है। परन्तु यात्रा की बात सुन कर शाह साहब अपना सिर हिलाकर कुछ गुनगुनाते रहे और घोड़े थक गए हैं ऐसा ही कुछ कहने लगे, परन्तु उनके बचन ठीक ठीक हुसेनी की समझ में न आए। जान पड़ता था कि हुसेनी को लेकर अन्तिम काल तक यहीं निवास करने की इच्छा उनके मन में बलवती हो रही थी। परन्तु थोड़ी देर में वे पड़ कर सो गए।

हुसेनी ने बिचारा कि मैं भी चल कर पड़ रहूं क्योंकि मैं भी बहुत थक गई हूं। और यों कह कर पूर्व रात्रि में बुढ़िया ने उसे जिस खटोले में सुलाया था, उसी पर जा कर लेट रही। थोड़ी देर पड़ी पड़ी सोचने लगी कि किस उपाय से मैं टिकियापुर पहुंचूंगी। परन्तु तुरन्त उसकी सब सुधबुध जाती रही और वह भी अचेत हो गई। दुसरा प्रश्न जो उसने आप ही आप कर पाया वह यह था—"अरे, मैं कितनी देर सोती रही हूं!"

यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर भारी थकावट के उपरान्त हमलोग कोई भी ठीक ठीक नहीं दे सकते हैं। हुसेनी अपनी आंख मलने लगी और उसी प्रश्न को उसने फिर चिल्लाकर कहा। परन्तु शाह साहिब के परिचित स्वर से उसका उत्तर पाकर वह बड़ी लज्जित हुई, क्योंकि शाह साहब उसकी चारपाई के पास बैठे हुए उसके निद्रित रूपराशि की शोभा देख रहे थे। वे बोले, "प्यारी! तुम्हें अच्छी नींद आई। अब सवेरा हो गया है। मैं रात भर पास बैठा हुआ तुम्हारी रखवाली करता रहा और आशा रखता हूं कि आज से तुम मुझे अपना चिरसेवक समझोगी"।

"शाह साहब! भला यह कैसा चरित्र है? तुम बूढ़े हुए तो क्या हुआ, पर ऐसा तुम्हें नहीं चाहिए था"—यों कह कर हुसेनी ने झटपट सब बस्त्रादिक अपने अधखुले शरीर पर समेट लिए।

शाह साहब ने उत्तर दिया "नहीं, नहीं, मैं बूढ़ा नहीं हूं। मेरा मन कह रहा है कि मैं अभी तक हट्टा कट्टा बना हूं। मेरे साथ तुम बड़े सुख से दिन काटोगी और तुम्हारे बिना मैं पल भर भी नहीं जी सकता। तुम्हारे विषय में चिन्ता करते करते मैंने रात भर पलक नहीं मारा है; मैंने अपना मनसूबा पका कर लिया है। और तुम्हारा अस्वीकार करना भी वृथा है, क्योंकि मैं तुमको जङ्गल के बीच में ले आया हूं। मेरे साथ तुम निकाह पढ़ लो। और मैं सच कहता हूं कि तुम्हें इसके लिये कभी पछताना नहीं पड़ेगा। तुम ऐसी सुन्दरी हो कि मैं अपने शेष दिन तक तुम्हारी पूजा करने में कमी नहीं चूकूंगा"।

हुसेनी चीख कर बोल उठी—"अरे कमबखत डोकरे! कोठरी से अभी बाहर निकल जा। मेरी देह पर कपड़ा नहीं है तो क्या हुआ। जो तू नहीं जायगा तो उठकर तेरी हड्डी पसली एक कर दूंगी। —बस खबरदार। एः! क्या?—तू मुझे पकड़ कर

दबा रक्खेगा ?–मेरे वस्त्र छोड़ दे।–छोड़ दे।–अरे मैं कहती हूं–एक बार छोड़ दे।–एक बार मेरे हाथ छुट जांय ते तेरी आंखे निकाल लूंगी।—अरे-अरे डेकरे–भूत! पाजी!–शैतान के नाती!-क्या! तू मुझे नहीं छोड़ेगा ?–दैाड़े! दैाड़े! बचाओ! अरे मार डाला! मार डाला!"—और वह इतने ज़ोर से चिल्लाई कि अकस्मात् उसके ऊपर से सब बोझा हट गया।

"ओः! वह चला गया!"—यों कह कर वह लम्बी लम्बी सांस लेने लगी और कोठरी के चारों ओर देख कर बोली कि "अच्छा हुआ। नहीं ते मैं हो उसे—अरे खुदा ख़ैर करे! मैं कपड़े, उतार ही कर सोई थी। तनिक भी सुध मुझे नहीं है कि—"

इस समय उसे अपनी दयालु गृहस्वामिनी बुढ़िया के देख कर बड़ा आश्चर्य हुआ। उसका चिल्लाना सुनकर बुढ़िया दैाड़ती हुई वहां आई और पूछने लगी कि क्या हुआ है? तब हुसेनी बीबी ने अपनी सब अद्भुत कथा कह सुनाई। जब बुढ़िया अन्त तक सब सुन चुकी ते दन्तरहित मुख के फाड़ कर बहुत हँसी और उसने कहा–"चले कुछ चिन्ता नहीं! बूढ़े के पंजों से तू अब निर्विघ्न है। चल, उठ, आठ बज चले। मैंने रोटी बना रक्खी है। तू ऐसी गहरी नींद में सो रही थी कि मैंने तुझे नहीं जगाया। और अश्चर्य ही क्या है। कल रात के दे बजे तक तू जागती रही, फिर राह की हारी मादी यह सब अद्भुत स्वप्न देखा ते कोई आश्चर्य नहीं। अब चल, आ"।

पलुए जङ्गली जानवर

मिस्टर एलबर्ट जेमराक (Mr. Albert Jamrach) एक प्रसिद्ध प्रकृतितत्वज्ञ (Naturalist) और जङ्गली जानवरों के सैादागर हैं। थोड़े दिन हुए एक अंगरेज़ी संवादपत्र के संवाददाता ने इनसे 'पलुए जङ्गली जानवरों' के विषय में वार्तालाप किया था और उसको संवाद-पत्र में प्रकाशित करवाया था, जिसका आशय नीचे प्रकाशित किया जाता है। आशा है कि पाठकों के रुचिकर हो।

एलबर्ट जेमराक महाशय का कथन है कि "मैंने हर प्रकार के पलुए जङ्गली जानवरों के बेचा है। अभी थोड़े दिन हुए मैंने एक तेंदुए के बेचा था जिसका मोल लेनेवाला आक्सफोर्ड विश्व-विद्यालय का एक विद्यार्थी था। वह विद्यार्थी किसी बोरडिङ्ग हाउस के कमरे में रहता था। उसे तेंदुए के अपने कमरे के भीतर बड़े गुप्तभाव से लेजाना पड़ा, क्योंकि यदि वहां के अध्यक्ष इस बात के जान जाते ते तुरन्त उस तेंदुए के हाते के बाहर निकलवा देते। तेंदुए का बच्चा बड़ा सुहा-वना पलुवा जानवर होता है। कभी कभी बाघ भी ऐसे पलुए हो जाते हैं कि मनुष्यों के संग घर में बास करने लगते हैं।

किसी सैनिक कमान ने मेरे बाघों के संग्रह में से एक बाघ के (मुझसे) ख़रीदा था। उसने बाघ के गले में पट्टा और संकल पहिना दी और संकल पकड़ कर वह उसे अपने साथ साथ फिराने लगा। उन्हीं कमान महाशय ने एक बेर एक तेंदुए के पाला जे थोड़े दिनों के पश्चात् अपने मालिक के पीछे कुत्ते की भांति फिरने लगा।

बाघ के पालने में बड़ा ख़र्च लगता है जिसे बहुत थोड़े मनुष्य उठा सकते हैं।

यदि मालयदेशीय रीछ (Malaya bears) अच्छी तरह पाले जावें ते उनसे किसी प्रकार का भय नहीं पहुंचता। थोड़े दिन हुए मैंने एक मालय देशीय पलुवा रीछ एक धनवान महाशय के हाथ बेचा था। यद्यपि वह रीछ प्रायः पूरा जवान हो गया था, तथापि वह उसे घर में इधर उधर फिरने देता था।

मेरे पास कई रीछ हैं जे पलुए जानवर की भांति काम में लाए जा सकते हैं।

एक बेर किसी धनवान व्यक्ति ने मुझसे एक पलुवा सिंह क्रय किया। उन महाशय का यह

विचार था कि वह सिंह को वनस्पतिभक्षक बनावेंगे, जिससे उसका दुष्ट स्वभाव दबा रहे। मैंने उनको उसी समय सूचित किया कि आपकी परीक्षा निष्फल होगी और वैसाही हुआ। वह सिंह छ सप्ताह के पश्चात् मर गया क्योंकि उसे उसके स्वभावानुकूल भोजन न मिला।

सिंह मांसभक्षक जन्तु है। उसे कोई उसकी प्रकृति विरुद्ध जबरदस्ती बनस्पति भक्षण नहीं करा सकता। यह सिद्धान्त कि ऐसा होना सम्भव है केवल पत्रों की शोभा है, व्यवहार में नहीं लाया जा सकता। यदि कोई किसी प्रकार से सिंह को उसकी पुश्त-दर-पुश्त बनस्पति भक्षण करा सके तो सम्भव है कि अन्त में वह बिल्ली जैसा शीघ्र वश में होनेवाला जन्तु बन सके। परन्तु बाधा यह है कि बिना मांस के सिंह यथोचित समय तक जी ही नहीं सकता।

सिंह के बच्चे बड़े सुहावने और प्रिय पलुवे जन्तु हो जाते हैं, परन्तु एक वर्ष की वय के पश्चात् वे भयानक हो जाते हैं। वे ऐसे ताकतवर होजाते हैं कि केवल खेल ही खेल में ऐसा धक्का लगाते हैं कि जिसे मनुष्य बहुत दिनों तक भी न भूले। इसके अतिरिक्त उनके मांस और रुधिर के सूंघ लेने का भी भय है। यदि किसीका विचार सिंह-शावक को पालने का हो तो उसे इस बात की पूरी सावधानी रखनी चाहिए कि वह कहीं कच्चे मांस के समीप न चला जावे। यदि सम्भव हो तो सिंह को उबला हुआ मांस खिलाना उत्तम होगा। यह बात निर्विवाद है कि सिंह कच्चे मांस को अधिक प्रसन्नता से खाता है, परन्तु इस प्रकार के भोजन से उसमें उसकी जङ्गली आदत का पुनः संचार हो जाता है।

जङ्गली जानवरों के पालने में बड़ा आनन्द होता है, परन्तु इस काम में खर्च बड़ा लगता है। केवल रुपए वाले पुरुष ही यह आनन्द ले सकते हैं।

वनमानुस और शिम्पेनजी (एक प्रकार के बिना पूंछ के बन्दर) भी प्रायः पलुवे जानवर की भांति बिकते हैं। इनमें शिम्पेनजी अधिक हृदयग्राही होता है। मेरा एक ऐसे शिम्पेनजी से परिचय है जिसे गिनना, चमचे से खाना पीना और चुरट पीना सिखलाया गया है।

वास्तव में प्रत्येक जङ्गली जानवर पलुवा हो सकता है यदि वह बचपन में पकड़ा जावे और पालनेवाला स्वयं इस ओर दत्तचित्त रहे। परन्तु ऐसा समय भी अवश्य आता है कि तब उस जानवर को घर में इधर उधर डोलने देना उचित न समझा जावे, क्योंकि उमर के अधिक होने पर उसमें जङ्गली आदतों का आपसे आप संचार होने लगता है।

लाला सीताराम, बी.ए.,डिपटीकलकृर,

के रचे हिन्दी भाषा के ग्रन्थ

रघुबंश भाषा—सरल चौपाइयों में, दिलीप, रघु, अज, दशरथ, श्रीरामचन्द्र, कुश आदि रघुबंशी राजाओं के चरित। दाम ॥)

कुमारसंभवभाषा—चौपाइयों में, श्रीपार्वतीजी का जन्म, तपस्या और बिवाह। दाम ।)

मेघदूतभाषा—कवित्तों में, एक बिरही ने मेघ को दूत बनाकर अपनी प्रिया के पास संदेशा भेजा है। दाम ≡)

ऋतुसंहार—अनेक छन्दों में छः ऋतुओं का बर्णन। दाम =)

पिछले तीनों साथ, जिल्द समेत ॥)

महावीरचरितभाषा—श्री रघुनाथजीके चरित नाटक के रूप में बिवाह से लेकर लङ्का विजय और अभिषेक तक लिखे हैं, रामलीला कराने के योग्य ॥)

उत्तररामचरित नाटक भाषा—सीता जी के दूसरे बनवास, अश्वमेध यज्ञ और लवकुश के मिलने की कथा। दाम ॥)

मालतीमाधव भाषा—प्रेम का ऐसा नाटक दूसरा नहीं है। दाम ॥)

मृच्छकटिक नाटक भाषा—इसमें एक वेश्या के साथ एक भले मानस की प्रीति की कथा बड़ी अपूर्व है। दाम ॥=)

मालविकाग्निमित्र नाटक भाषा—राजा अग्निमित्र मालविका को चाहते थे, पर रानी के भय से मनोरथ पूरा नहीं होता था; प्रेम और सोतिया दाह की कहानी। दाम ।=)

नागानन्द—प्रेम और उपकार की कहानी (छप रहा है)।

सावित्री–पतिव्रता का चरित, स्त्रियों के पढ़ाने योग्य। दाम)॥।

नई राजनीति–हितोपदेश कहानियों में (जल्द छप जायगा)

यह किताब बहुधा इंडियन प्रेस की बहुत ही उत्तम छपी हैं।

ठिकाना—गिरिजाकिशोर, परेड, कानपुर।

मधुकर

जैसे पुष्प से पुष्पान्तर पर बैठ बैठ कर मधु संचय करता है, ज्ञानार्थी भी उसी प्रकार जहां

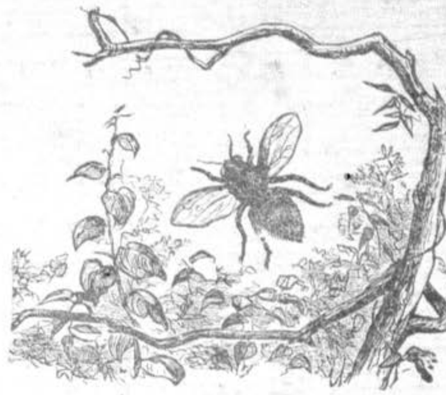

सुविधा हो वहीं से अपने ज्ञान भण्डार की वृद्धि किया करते हैं। और जैसे ज्ञान का भण्डार नाना स्थान से परिपूर्ण होता है उसी प्रकार साहित्य-भण्डार भी देश विदेश की ज्ञानगाथा के संचय से पुष्ट होता है। विख्यात फारसी कवि, सुलेखक और महाज्ञानी शेख सादी का नाम किसने नहीं सुना है, और हिन्दी साहित्य के सुलेखक और कवि पण्डित अयोध्यासिंह उपाध्याय का नाम भी सब हिन्दी साहित्य के प्रेमी भली भांति जानते हैं। यदि आप इन दोनो पारसिक और नागरी कवियों का अपूर्व सम्मिलन देखा चाहें तो एक प्रति

उपदेश-कुसुम

अवश्य मँगवाकर पढ़िए। शेख सादी के ज्ञानोपदेश का मनोरम सुगन्ध इस कुसुम में आपको मिलेगा। यह कुसुम सादी कृत गुलिस्तां के आठवें बाब का उपाध्यायजी कृत गद्य-पद्य-मय विचित्र और मनोहर अनुवाद है। भाव और भाषा इसकी बड़ी मनोहर हैं। केवल मात्र दो आना मूल्य और आध आना डाकव्यय भेजने से नीचे के पते से यह अलभ्य सुन्दर पुस्तक आपको मिल सकती है।

मेनेजर इंडियन प्रेस,

इलाहाबाद

प्राचीन ज्यौतिषमखेचिमाला।

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद्वेदांगशास्त्राणां गणितं मूर्द्धनि स्थितम्॥

एक प्रसिद्ध वचन है कि जैसे मोरें की शिखा ग्रैार सांपें की मणि होती है वैसेही वेदांगशास्त्रों में गणित है। गणित ग्रैार ज्यौतिषशास्त्र की जन्म-भूमि यही देश है ग्रैार यहीं से गणित संसार भर में फैला है। यहां से ग्ररब में गया, वहां से यूरोप पहुँचा। पर बड़े शोक की बात है कि हमारेही देश में ग्राजकल कुछ थोड़े से पण्डितें को छोड़कर कोई गणित का नाम भी नहीं जानता। जो लोग प्राचीन रीति से गणित पढ़ते हैं उनमें से सैा में निन्नानबे का पढ़ना न पढ़ना बराबर है। पंचांगें की सहा-यता से फल बिचारा जाता है, पर गणित न जानने से ठीक गणना कैसे हो सकती है? सो बिना गणित जाने फलित का विचार भी ग्रशुद्धही होता है। जिन लोगें ने ग्रंग्रेजी गणित पढ़ा है वह बहुधा समझते हैं कि संस्कृत में साइत बतानेही भर को गणित है। बहुधा लोग यह जानते हैं कि पृथिवी की गोलाई, इसका निराधार सिद्ध होना ग्रादि, पृथिवी की छाया में पड़ने से ग्रहण पड़ना, यह सब ग्रंग्रेजी मत है ग्रैार ग्रंग्रेजों से हम लोगें ने सीखा है। ऐसे लोग इस माला को ग्रवश्य देखकर ग्रपना भ्रम मिटावें। संस्कृत में संक्षेप लिखने की रीति प्रचलित है। इससे साधारण संस्कृत जाननेवाले विना गुरु के गणित नहीं समझ सकते। किसी रीति से प्रश्न का उत्तर कैसे सिद्ध होता है ग्रैार क्यों सिद्ध होता है यह बहुत से पंडित भी नहीं जानते। गणितशास्त्र के ग्राचार्य महामहोपाध्याय पंडित सुधाकर द्विवेदी ने ग्रपने शोधे बीजगणित ग्रैार लीलावती में उपपत्तियां दी हैं पर यह सब संस्कृत में है। इस विचार से ग्रंग्रेजी के प्रसिद्ध गणितज्ञ संस्कृत के विद्वान ग्रैार भाषा के सुकवि श्री ग्रवध-वासी भूप उपनाम लाला सीताराम बी. ए. ने गणित ग्रैार ज्योतिष के ग्रन्थों की एक श्रेणी सरल भाषा में रची है। इस श्रेणी में छ ग्रन्थ हैं। प्राचीन रीतियें के साथही साथ नई ग्रंग्रेजी रीतियां भी लिखदी गई हैं ग्रैार प्रश्नों की क्रिया ऐसी फैलाकर लिखीगई है कि साधारण गणित जाननेवाले भी इसको समझ जायँगे। इस माला के ग्रन्थों का व्योरा यह है–

ग्रङ्कगणित–भास्कराचार्य कृत लीलावती के ग्रन्तर्गत ग्रङ्कगणित भाग।

बीजगणित–भास्कराचार्य कृत बीजगणित।

क्षेत्रव्यवहार–लीलावती ग्रैार बीजगणित के ग्रन्तर्गत क्षेत्रव्ययहार।

गणिताध्याय–भास्कराचार्य कृत प्रसिद्ध ग्रन्थ।

गोलाध्याय–जिसमें पृथ्वी का निराधार सिद्ध होना ग्रहण पड़ने का कारण ग्रादि लिखे हैं।

सूर्यसिद्धान्त–प्रसिद्ध ग्रैार सबसे प्रमाणिक ग्रन्थ।

यह माला ऐसी नहीं है जिसके बहुत से ग्राहक हों या जिसके प्रकाश करने में किसी प्रकार के लाभ की ग्राशा हो। गणित के ग्रन्थों की छपाई भी ग्रधिक पड़ती है, इससे ग्राशा है कि देशहितैषी धनाढ्य लोग मेरी पूरी सहायता करेंगे। मूल सं-स्कृत के छहो ग्रन्थों का ६ रू० से ग्रधिक है। उपपत्ति ग्रैार टीका समेत ग्रन्थ बहुत बढ़जायँगे। सम्पूर्ण माला का दाम डाकव्यय सहित ६ रु० होगा, पर तीन तीन ग्रन्थों का ग्रग्रिम मूल्य ग्राने ग्रैार २०० ग्राहक होने पर ग्रन्थ १ सितम्बर सन १९०१ ई० से छपने लगेगा। पहिले तीन ग्रन्थों का दाम डाक व्यय सहित २॥) होगा।

गिरजाकिशोर–

ग्रांड परेड, कानपुर,

सरस्वती
सचित्र
हिन्दी मासिक पत्रिका
[काशी नागरी प्रचारिणी सभा के अनुमोदन से प्रतिष्ठित]
सम्पादक
बाबू श्यामसुन्दर दास, बी. ए.।
इण्डियन प्रेस, प्रयाग, से छपकर प्रकाशित।
वार्षिक अग्रिम मूल्य ३) प्रति संख्या ।=)

लाला सीताराम, बी.ए.,डिपटीकलक्टर,

के रचे हिन्दी भाषा के ग्रन्थ

रघुवंश भाषा—सरल चौपाइयों में, दिलीप, रघु, अज, दशरथ, श्रीरामचन्द्र, कुश आदि रघुवंशी राजाओं के चरित। दाम ॥)

कुमारसंभवभाषा—चौपाइयों में, श्रीपार्वतीजी का जन्म, तपस्या और बिवाह। दाम ।)

मेघदूतभाषा—कवित्तों में, एक बिरही ने मेघ को दूत बनाकर अपनी प्रिया के पास संदेशा भेजा है। दाम ≡)

ऋतुसंहार—अनेक छन्दों में छः ऋतुओं का बर्णन। दाम =)

पिछले तीनों साथ, जिल्द समेत ॥)

महावीरचरितभाषा—श्री रघुनाथजी के चरित नाटक के रूप में बिवाह से लेकर लङ्का विजय और अभिषेक तक लिखे हैं, रामलीला कराने के योग्य ॥)

उत्तररामचरित नाटक भाषा—सीता जी के दूसरे बनवास, अश्वमेध यज्ञ और लवकुश के मिलने की कथा। दाम ॥)

मालतीमाधव भाषा—प्रेम का ऐसा नाटक दूसरा नहीं है। दाम ॥)

मृच्छकटिक नाटक भाषा—इसमें एक वेश्या के साथ एक भले मानस की प्रीति की कथा बड़ी अपूर्व है। दाम ॥=)

मालविकाग्निमित्र नाटक भाषा—राजा अग्निमित्र मालविका को चाहते थे, पर रानी के भय से मनोरथ पूरा नहीं होता था; प्रेम और सौतिया दाह की कहानी। दाम ।=)

नागानन्द—प्रेम और उपकार की कहानी (छप रहा है)।

सावित्री–पतिव्रता का चरित, स्त्रियों के पढ़ाने योग्य। दाम)।।।

नई राजनीति–हितोपदेश कहानियों में (जल्द छप जायगा)

यह किताब बहुधा इंडियन प्रेस की बहुत ही उत्तम छपी हैं।

ठिकाना—गिरिजाकिशोर, परेड, कानपुर।

श्रीमद्भागत

मूल श्लोक तथा भाषा टीका सहित

सम्पूर्ण १२ स्कन्ध, मू० डांक व्ययसहित ३ रु०। बम्बई के सुन्दर टाइप में उत्तम कागज़ पर छप-कर प्रकाशित हुई है। बड़े अक्षरों में ऊपर मूल श्लोक और नीचे छोटे अक्षरों में प्रति श्लोक का सुन्दर और सरल भाषा टीका छापागया है। इसको भाषा टीका में श्रीधरी, बालप्रबोधिनी, विजयध्वजी, तोषिणी इत्यादि सबही सुन्दर संस्कृत टीकाओं का आशय लिखा गया है। अनेक संस्कृत टीकाओं की पुस्तकें न ख़रीद करके इसही के पठनपाठन से पंडित गण और श्रीमद्भावत् के प्रेमियों को किसी विषय में कोई सन्देह नहीं रहैगा। पुस्तक को व्यासगद्दी पर रख कर बांचने से अत्यन्त शोभा होगी। कथा बांचने वाले पंडितों के लिये तो यह श्रीमद्भागवत कल्पवृक्ष है। मू० डांक व्यय सहित ३) है। ... पुस्तकें एक साथ ख़रीदने वालों को १ प्रति भेंट में मिलैगी। ५०० ग्राहक हो जाने पर मूल्य बढ़ेगा।

बलदेवप्रसाद मिश्र

तंत्रप्रभाकर प्रेस—मुरादाबाद

महाशय, यदि आपने सरस्वती का मूल्य अब तक नहीं भेजा है तो कृपा पूर्वक उसके भेजने की चेष्टा कीजिएगा। अधिकांश महाशयों ने मूल्य भेजकर सरस्वती को उचित समय पर सहायता पहुंचाई है उनको हम धन्यवाद देते हैं। आप हिन्दी साहित्य के प्रेमी हैं। आपको यह बात अवश्य ज्ञात है कि उचित समय पर सहायता पहुंचाए बिना सरस्वती अपना कर्त्तव्य ठीक ठीक नहीं पालन कर सकती। आशा है कि मनी आर्डर द्वारा आप रुपया शीघ्र भेज देवेंगे।

आपका कृपाकांक्षी

मेनेजर सरस्वती

इण्डियनप्रेस, प्रयाग

श्रीमान् राजेश्वर सप्तम एडवर्ड की धर्म्मपत्नी
महारानी एलेकज़ेण्ड्रा

सरस्वती

सचित्र मासिक पत्रिका

भाग २] जून १९०१ ई० [संख्या ६

विविधवार्ता

गत मास की सरस्वती में हम अपने पाठकों को महाराणी विक्टोरिया के अनेक चित्रों का दर्शन करा चुके हैं और उनके विशद चरित्र का भी वर्णन सुना चुके हैं। आज हम श्रीमान महाराज राजेश्वर सप्तम एडवर्ड और उनकी धर्मपत्नि महाराणी अलेकज़ेण्ड्रना के चित्रों का दर्शन कराते हैं। महाराज का राजत्वकाल अभी प्रारम्भ हुआ है, अतएव हम उनके विषय में अभी कुछ नहीं कह सकते। इतने दिनों तक महाराज ने राजकाज का काम बहुत थोड़ा किया। केवल भिन्न भिन्न अवसरों पर महाराणी के प्रतिनिधि स्वरूप होकर इन्होंने भिन्न भिन्न स्थानों पर वक्तृता दी थी। निज जीवन का विशेषांश उन्होंने गार्हस्थ्य धर्म्म के निर्वाह में ही बिताया, परन्तु इसमें भी ये सदा सबके प्रिय स्नेहभाजन बने रहे। श्रीमती महाराणी के चरित्र से और राजकीय घटनाओं से कभी कोई विशेष सम्बन्ध न रहा। इनका समस्त काल पति की सेवा सुश्रुषा और बालकों के पालन पोषण तथा पठन पाठन में ही बीता। अपने सेवकों पर भी इनकी प्रीति सदा बनी रही। एक समय महाराज सप्तम एडवर्ड बहुत बीमार पड़गए। बीमारी यहां तक बढ़ी कि प्रजा उनके जीवन से निराश हो बैठी। इन दिनों महाराणी ने सब काम छोड़ दिए थे, केवल एक पतिसेवा का व्रत कर रक्खा था; समस्त काल महाराज की शय्या ही के निकट बितातीं और उनके दुःख को घटते देख अपनेको परम धन्य और उनके शारीरक क्लेश से अपनेको परम दुखित मानतीं। महाराज की इस रुग्नावस्था के दिनों में उनका एक सेवक भी रुग्न-शय्या पर पड़ा हुआ था। महाराज की सेवा सुश्रुषा से जब कभी महाराणी को अवकाश मिलता, वे तुरन्त उस सेवक की सुध लेतीं। बड़े लोगों में ऐसा शील स्वभाव विरलाही कहीं देखने में आता है। यदि ऐसा सार्वजनिक स्नेह हमारे नवीन महाराज और महाराणी भारत की दीन दुखिया प्रजा पर

भी दिखाएँगे तो एक न एक दिन हमलेगों के भी भाग्य खुल जांयगे।

***

अलोकचित्रणविद्या से प्रेम रखने वालों को आज हम एक विचित्र वृत्तान्त सुनाते है जो अत्यन्त कैातूहलवर्धक है। जिन महानुभावों ने इस पत्रिका में "फोटोग्राफी" शीर्षक लेख को ध्यानपूर्वक पढ़ा होगा, उन्हें इस बात के बताने की आवश्यकता नहीं है कि क्यामरा किस वस्तु को कहते हैं। संसार में सबसे बड़ा क्यामरा अमेरिका की "शिकागो ऐण्ड आलटन रेलरोड कम्पनी" ने बनवाया है। बनानेवाले जार्ज लारेंस महाशय हैं। इसके बनाने में तीन मास का समय लगा था ग्रैार अब यह तैाल में १७ मन के लगभग है। इसमें ८ फीट लम्बी ग्रैार ४½ फीट चैाड़ी तसवीर उतर सकती है। यह इतना बड़ा ग्रैार भारी है कि इसको ठीक करने में १६, १७ मनुष्यों की आवश्यकता पड़ती है। जब कभी उसे अन्दर से साफ करने की आवश्यकता होती है तो उसमें आदमी सुगमता से चला जाता है ग्रैार उसे झाड़ पोंछ कर बाहर चला आता है। इसमें जो प्लेट लगाया जाता है उसका बोझ ५० सेर का होता है। जिन लोगों ने फोटोग्राफी का काम किया है, वे अनुमान कर सकते हैं कि ५० सेर के प्लेट को ठीक करके क्यामरा में लगाना ग्रैार उसे पुनः रासायनिक द्रव्यों से धो धा कर ठीक करना ग्रैार तब उसपर से चित्र छापना कितना कठिन कार्य है। प्लेट को ऐसी उत्तम रीति से ढक कर क्यामरा में लगा देते हैं कि एक बटन के दबा देने से उसके आगे का परदा हट जाता है ग्रैार फिर बटन के दबाने से वह गिर पड़ता है। एक्सपोज़ करने में प्रायः ३० सेकेण्ड का समय लगता है। गत पेरिस प्रदर्शनी के लिये यह क्यामरा बनवाया गया था ग्रैार अब इससे बराबर काम लिया जाता है। उसको एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने के लिये एक विशेष गाड़ी बनी हुई है।

***

गत मास में हम तुलसीकृत रामचरितमानस के संस्करण के विषय में लिख चुके हैं। उसी लेख में हमने पृथ्वीराज रासो के विषय में लिखने की प्रतिज्ञा की थी। इस अमूल्य रत्न पर भांति भांति के व्यर्थ आक्षेप लगाए जाते हैं। इनमें प्रधान उदयपुर के कविराजा श्यामलदास जी हो चुके हैं। अबतक इनके शिष्य वर्त्तमान हैं जो श्यामलदास जी के रोने को पीटते चले आते हैं। परन्तु दुःख की बात यह है कि किसीने भी ग्रन्थ प्रकाशित करवा के उसके गुण दोष के विवेचन पर ध्यान न दिया। श्यामलदास जी के विरोध के कई कारण हुए, जिनमें प्रधान उदयपुर दर्बार की इच्छा ग्रैार कविराज जी की स्वयं द्वेषाग्नि हैं। हमारी समझ में यह नहीं आता कि बिना ग्रन्थ को पूर्णतया प्रकाशित किए उसपर विवाद करना कहां तक युक्तिसंगत है। पृथाबाई का विवाह रावल समरसिंह के साथ हुआ अथवा नहीं, रावल समरसिंह पृथ्वीराज की लड़ाई में मारे गए या नहीं, इन ऐतिहासिक घटनाओं से ग्रैार परस्पर के ईर्षा द्वेष से क्या सम्बन्ध है यह समझ में नहीं आता। यदि यह मान भी लिया जाय कि इस ग्रन्थ में कुछ अशुद्धियां हैं भी, तो इससे क्या यह आवश्यक है कि वह ग्रन्थ छापा ही न जाय। उदयपुर के पण्डित रामनारायण डूंगर ने एक पुस्तक "पृथ्वीराज चरित्र" नाम की छापी है जिसको वे कहते हैं कि मैंने पृथ्वीराज रासो के आधार पर लिखा है। जिन्होंने पृथ्वीराज रासो को देखा है वे कह सकते हैं कि कहां तक कपोलकल्पित कथाएं इस "चरित्र" में भरदी गई हैं। अन्य महाशय तो यही मान लेंगे कि रासो रद्दी है। इसके अतिरिक्त हमारे देश के लोगों की इतिहास की ग्रोर कुछ ऐसी अरुचि है ग्रैार कुछ आत्मश्लाघा में इतने पड़े हुए हैं कि वास्तविक घटनाओं को छोड़कर जिसमें अपनी बड़ाई हो, अपना बड़प्पन सिद्ध रहे, उसीके करने में तत्पर रहकर इतिहास के गले पर छूरी फेरते

हैं। स्वयं उदयपुर दर्बार भी इस दोष से बच नहीं सकता है, परन्तु इस विषय पर हम फिर कभी लिखेंगे।

कभी यह भारतवर्ष विद्या के लिये इतना प्रसिद्ध था कि संसार के समस्त देशों का मुकुट माना जाता था, पर आज इस देश में विद्या तथा विद्यासम्बन्धी विषयों से हमारे देशवासियों की वह अरुचि हो रही है कि उसे देखकर ईश्वरही का नाम लेना पड़ता है। पृथ्वीराज रासैा सा प्रसिद्ध ग्रन्थ हो और पढ़े लिखे लोग यहां तक न जानें कि वह किस प्रकार की भाषा में लिखा है, उसमें किन विषयों का वर्णन है, वह कितना बड़ा है और कब बना! अस्तु, आज हम हिन्दी पाठकों के सूचनार्थ उसके अध्यायों की सूची नीचे देते हैं।

(१) आदि पर्व, (२) दसम समयो, (३) दिल्ली किल्ली कथा, (४) आजानवाह समयो, (५) कन्हपट्टी समयो, (६) आषेटक बीर वरदान समयो, (७) नाहर राय समयो, (८) मेवाती मुगल समयो, (९) हुसेन कथा, (१०) आषेट चूक समयो, (११) चित्ररेखा समयो, (१२) भोला राय भीम समयो, (१३) सलष जुद्ध समयो, (१४) इंछिनी व्याह समयो, (१५) मुगल जुद्ध समयो, (१६) दाहिमी व्याह समयो, (१७) भौमि सुवन समयो, (१८) दिल्लीदान समयो, (१९) माधो भाट कथा, (२०) पदमावती व्याह समयो, (२१) पृथा व्याह समयो, (२२) होली कथा, (२३) दीपमाल कथा, (२४) धन कथा, (२५) ससिव्रता कथा, (२६) देवगिरि जुद्ध समयो, (२७) रेवातट समयो, (२८) अनंगपाल समयो, (२९) घग्घर की लड़ाई समयो, (३०) करणाटी पात समयो, (३१) पीपा जुद्ध समयो, (३२) इन्द्रावती वारहेज समयो, (३३) इन्द्रावती व्याह समयो, (३४) जैतराव जुद्ध समयो, (३५) कंगूरा जुद्ध समयो, (३६) हंसावती व्याह समयो, (३७) पाहड़राय समयो, (३८) वरूण कथा, (३९) सोमेश्वर वध समयो, (४०) पज्जुन छोगा समयो, (४१) पज्जुन चालुक्य समयो, (४२) चन्द द्वारका गमन समयो, (४३) कैमास जुद्ध समयो, (४४) भोमवध समयो, (४५) विनयमङ्गल, (४६) सूक वर्नन, (४७) वालुकराय समयो, (४८) पंग जग्य विध्वंस समयो, (४९) संजोगिता पूर्व कथा, (५०) संजोगिता नेम समयो, (५१) हांसी प्रथम जुद्ध, (५२) हांसी द्वितीय जुद्ध, (५३) पज्जून महोवा जुद्ध, (५४) पज्जून पातसाह जुद्ध, (५५) सामंत पंग जुद्ध, (५६) समरपुङ्ग जुद्ध, (५७) कैमास वध, (५८) दुर्गकेदार समयो, (५९) दिल्ली वर्णन, (६०) जनगम कथा, (६१) कनवज्ज जुद्ध समयो, (६२) षटरितु वर्णन, (६३) सुक चरित्र, (६४) आषेट चूक स्राप समयो, (६५) धीर पुण्डीर समयो (६६) विवाह समयो (६७) बड़ी लड़ाई समयो, (६८) वानवध समयो, (६९) रयनसी समयो।

ये तो उसके ६९ अध्यायों की सूची है। श्लोक संख्या इस समस्त ग्रन्थ की लगभग ३२००० के है। यदि यह ग्रन्थ रायल अठपेजी आकार में छापा जाय तो अनुमान से २४०० पृष्ठ अर्थात् ३०० फार्म में पूर्ण हो जायगा। इसकी छपाई अच्छे कागज पर ५००० के लगभग पड़ेगी। इतने बड़े ग्रन्थ के पूर्ण रूप से सम्पादन होने और छपने में कम से कम दो वर्ष का समय लगेगा। यदि इस पुस्तक को सम्पादन करने के लिये एक सम्पादक, एक कवि (राजपुताने का) और दो सहायक दो वर्ष के लिये नौकर रक्खे जांय तो उसमें ४८०० रुपया व्यय होगा। बिना ऐसा प्रबन्ध किए इस ग्रन्थ के सम्यक-रूप से छपने का प्रबन्ध न हो सकेगा। हमारे अनुमान से इस कार्य में लगभग १०००० के व्यय होगा। यह कोई इतना धन नहीं है जो एकतृत न होसके। कोटा और बूंदी का राज्य अबलों चौहानों के वंश में चला आता है। उन्हें चौहानों के कीर्तिस्वरूप इस पृथ्वीराज रासैा के छपवाने में सयत्न होना चाहिए। यदि दोनो महाराज पांच पांच सहस्र रुपया देदें तो इस काम का हो जाना कोई बड़ी बात नहीं है, और यह धन इतना नहीं है कि जिसे वे

सुगमता से न निकाल सकते हों। हमे पूर्ण विश्वास है कि उक्त दोनों महाराजे हमारे इस लेख पर ध्यान देंगे॥

***

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक श्रार हिन्दी के कई एक पत्रों के जन्मदाता पण्डित दुर्गाप्रसाद जी हमें लिखते हैं कि आजकल हिन्दी के लेखक प्रायः शब्दों के ऊपयुक्त प्रयोग पर ध्यान नहीं देते। यह दोष यहां तक आता जाता है कि भाषा दिनों दिन बिगड़ती जाती है। उन्होंने उदाहरण स्वरूप एक "महा" शब्द लिखा है। वे कहते हैं कि बहुत से लेखकों को यही नहीं ज्ञात होगा कि इस शब्द का प्रयोग कहां कहां नहीं होना चाहिए। इसके ज्ञान के लिये निम्नलिखित श्लोक को स्मरण रखनेही से काम चल जायगा।

शङ्खे तैले तथा मांसे ज्योतिषिके भिषिके द्विजे।
यात्रयां पथि निद्रायां महच्छब्दो न दीयते॥

अर्थात् शङ्ख, तैल, मांस, ज्योतिषी, वैद्य, ब्राह्मण, यात्रा, पथ श्रार निद्रा इन शब्दों के साथ "महान" शब्द का प्रयोग न होना चाहिए। यदि इस बात पर ध्यान न दिया जायगा तो अर्थ में बड़ा भेद पड़ जायगा। इन शब्दों के साथ महत् शब्द के लगाने से क्या अर्थ हो जाता है यह नीचे लिखा जाता है।

महाशङ्ख = हड्डी। महायात्रा = यमलोक की यात्रा।
महातैल = चरबी। महापथ = यमपुरी का मार्ग।
महामांस = गोमांस। महानिद्रा = मृत्यु, वह निद्रा जिससे फिर मनुष्य जागे नहीं।
महाज्योतिषी = चन्द्रगुप्त। महावैद्य = यम।
महाब्राह्मण = महापात्र।

पण्डित जी का लिखना बहुत ठीक है। हमें आशा है कि हिन्दी के लेखकगण इससे लाभ उठावेंगे।

***

हिन्दीभाषा इस समय भारतवर्ष की प्रधान प्रधान देशभाषाओं में ज्येष्ठतम होने पर भी उस आसन पर नहीं विराज रही है जो उसे वास्तव में मिलना चाहिए था। प्राचीनता में, सरसता में, काव्यग्रन्थों में, अधिकार में इसकी समता दूसरी भाषा नहीं कर सकती; पर कारण क्या है कि अब तक उसने उन्नति न की श्रार बङ्गाली, गुजराती, मराठी, उर्दू आदि भाषाएं जो इसके सामने उत्पन्न हुई, परम उन्नति के पद पर पहुंच गई। अनुसन्धान श्रार विचार करने पर यही देखने में आता है कि इसका आधुनिक रूप अभी सौ ही वर्ष का पुराना है। इससे अभी तक यदि इसने उन्नति न की तो कोई आशंका की बात नहीं है, समय पा कर सब ठीक हो जायगा। यह सत्य है। पर बङ्गाली भाषा तो अभी ५० ही वर्ष की हुई है। उसने इतनी उन्नति क्यों कर ली? हमारी समझ में इस अवरोध के दो कारण हैं। मुख्य कारण तो देशवासियों का विराग श्रार पढ़े लिखे लोगों की उपेक्षादृष्टि है। जो लोग संस्कृत पढ़े हैं वे समझते हैं कि भाषा का पढ़ना लिखना हेय कार्य है, पर वास्तव में बात यह है कि उनमें से अधिकांश एक पंक्ति भी शुद्ध हिन्दी नहीं लिख सकते। हां, यदि वे चाहें तो उनके लिये हिन्दी का शुद्ध लिखना सीखलेना कोई बड़ी बात नहीं है। अंग्रेज़ी पढ़े लिखे लोग यह सोचते हैं कि जो आनन्द अंग्रेज़ी में है, जितनी पुस्तकें अंग्रेज़ी में हैं, उतनी हिन्दी में नहीं; इसलिये क्या आवश्यकता है कि हम हिन्दी पढ़ें, हमारा काम तो अंग्रेज़ी से ही भली भांति चला जाता है। इन स्वार्थान्ध, कूपमण्डूकवत् विचारनेवाले लोगों को यह नहीं सूझ पड़ता कि किसी देश ने अपनी मातृभाषा की उन्नति बिना, उन्नति नहीं की है। दूसरा कारण हिन्दी की उन्नति के अवरोध का यह है कि इसकी दो प्रकार की भाषाएं हैं, एक गद्य की—दूसरी पद्य की। पद्य की भाषा गद्य से स्वतंत्र है, उसकी विभक्ति निराली श्रार प्रादेशिक भाषा की है; उसका जोड़ तोड़ भी अनोखा है। इसलिये पद्य के लिये

एक अलग व्याकरण की आवश्यकता है। एक व्याकरण से गद्य पद्य दोनों का काम नहीं चल सकता। वस्तुतः गद्य पद्य की भाषा एक होनी चाहिए; जब जो भाषा बोली और लिखी जाती है उसके काव्य भी उसी भाषा में होने चाहिएं। यह रीति पृथ्वी की सब भाषाओं में है। हमारी हिन्दी इस नियम से क्यों बाहर रहे यह समझ में नहीं आता। हमारी समझ में तो वह भाषा कदापि भाषा नहीं कहा सकती जिसका एक व्याकरण न हो। हमारे इस कथन का यह प्रयोजन नहीं है कि तुलसीदास सूरदास आदि ने जो ग्रन्थ लिखे हैं वे हिन्दी के ग्रन्थ नहीं हैं। वरन् समयानुकूल भाषा में परिवर्तन सदा होता रहता है। अतएव ये सब ग्रन्थ हिन्दी के अवश्य हैं, पर आधुनिक हिन्दी के नहीं। इसलिये इनका मान अधिक होना चाहिए। अब यदि हम यह चाहते हैं कि हमारी भाषा ठीक हो, वह उन्नति करे, तो हमें उचित है कि हम पुराने ढर्रे को छोड़कर पद्य को भी उसी भाषा में लिखें जिसमें हम गद्य लिखते हैं। यदि यह न हुआ तो हमारी भाषा सदा अपाहज बनी रहेगी और उसकी उन्नति सम्यक प्रकार से कभी भी न हो सकैगी।

***

हिन्दी कविता के सम्बन्ध में एक बात का जान लेना आवश्यक है। इस समय हमारे पद्य में जितने छन्दों का प्रचार है, प्रायः सभी मात्रा के हिसाब से गढ़े जाते हैं, पर आधुनिक हिन्दी की कविता का काम इन छन्दों से न चल सकेगा। बङ्गालियों ने छन्दों की उन्नति अच्छी की है। जब उन्होंने देखा कि प्राचीन छन्दों से हमारी भाषा का काम न चल सकेगा, तो उन्होंने नए छन्दों की रचना कर डाली। यह काम सदा से कवियों का रहा। क्या हमारी भाषा के कवि भी नायिकाभेद और समस्यापूर्ति को छोड़कर निज भाषा की वास्तविक उन्नति पर ध्यान देंगे?

***

खड़ी बोली की कविता के विषय में कुछ लिखते ही पण्डित श्रीधर पाठक का नाम स्मरण हो आता है। इसमें सन्देह नहीं है कि मुजफ्फरपुर के बाबू अयोध्याप्रसाद जी ने भाषा की इस सुधार पर बहुत कुछ जोर दिया और अभी तक वे इस उद्योग में लगे हुए हैं। पर इस अभाव की पूर्ति व्यर्थ की लिखापढ़ी से न हो सकेगी जब तक प्रतिभाशाली कविगण सुन्दर मनोहर कविता करके हिन्दी प्रेमियों को उसका रसास्वादन न करावेंगे और दूसरे कवियों को कविता करने का मार्ग न दिखावेंगे। क्या पण्डित श्रीधर पाठक, पण्डित महावीर प्रसाद द्विवेदी, तथा अन्य कविगण इस ओर ध्यान न देंगे और क्या यह उद्योग अनुचित होगा कि प्रारम्भिक पाठ्य पुस्तकों में खड़ी बोली की कविता हो से पद्यभाग सुशोभित रहे? हमारी प्रार्थना है कि वे लोग इस ओर ध्यान दें जिन्होंने हिन्दी का बीड़ा उठाया है और जो इस कार्य को करना अपना परम कर्तव्य मानते हैं। आग्रह, ईर्षा, अथवा द्वेष से काम न चलेगा, जो वास्तव में उचित है उसीकी ओर ध्यान रहना चाहिए।

***

अत्यन्त प्राचीनकाल से भारतवर्ष में जातिभेद चला आता है। पुराने ढर्रे के कट्टर हिन्दुओं का यह कथन है कि जातिभेद वेद के समय से चला आता है। आधुनिक विद्वान लोगों की यह सम्मति है कि ज्यों ज्यों आर्यजाति की उन्नति होती चली त्यों त्यों यह वर्णभेद भी बनता चला और समय पाकर यह इतना पूर्ण हो गया। परन्तु इस बात को सब लोग मानते हैं कि प्रारम्भ में यह भेद कर्म्मप्रधान था, जन्मप्रधान नहीं। ज्यों ज्यों समाज की उन्नति होती चली, पुरुषों के कर्म्मों पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा और समय पाकर ये चार भेद हो गए। जिन लोगों ने पठन पाठन पर ध्यान दिया और जो शुद्धता और सत्यता आदि सद्गुणों के लिये प्रसिद्ध हुए, वे ब्राह्मण कहलाए; जिन लोगों ने युद्धकौशल दिखलाया और दूसरों की रक्षा करना अपना

कर्तव्य माना, वे क्षत्रिय कहलाए; जो दूसरों को आवश्यक सामग्री देने लगे तथा वाणिज्य व्यापार में दत्तचित्त हुए, वे वैश्य कहलाए; और जो दूसरों की सेवा सुश्रुषा करने लगे वे शूद्रनाम से पुकारे जाने लगे। प्रारम्भ में यही चार जातिभेद थे, पर अब समय पाकर न जाने कितने ही भेद हो गए हैं। भारतवर्ष के प्रत्येक प्रान्त में सैकड़ों जातियां बसती हैं जिनके भेदों और उपभेदों की संख्या सहस्रों तक पहुंचती है। इन सब जातियों की रहन सहन, विचार और रीति रस्में भिन्न भिन्न हैं। भारतवर्ष में इस समय एक विदेशी गवर्न्मेण्ट राज्य करती है। शासन के उत्तम होने के लिये यह आवश्यक है कि वह सब जातियों का ब्योरा पूरा पूरा जाने। इसके अतिरिक्त अब शिक्षा के प्रभाव से रीति नीतियों में भी भेद पड़ चला है। इसलिये यह आवश्यक है कि अब तक जो अवस्था है यह लिख ली जाय कि जिसमें आगे चल कर यह जाना जा सके कि शिक्षा का प्रभाव कहां तक पड़ा है। इन्हीं विचारों से गवर्न्मेण्ट ने यह निश्चय किया है कि प्रत्येक प्रान्त में एक एक पुस्तक बन जाय जिसमें वहां वहां की जातियों का पूरा पूरा वृत्तान्त संगृहीत रहे। इस कार्य के लिये डेढ़ लाख रुपया गवर्न्मेण्ट ने व्यय करना स्वीकार किया है। इसका प्रवन्ध इस प्रकार पर सोचा गया है—मद्रास, बम्बई, बङ्गाल, पश्चिमोत्तर प्रदेश, पञ्जाब, बर्म्मा, मध्यप्रदेश और आसाम में ये पुस्तकें बनाई जायगी; प्रत्येक प्रान्त में २००) रु० मासिक वेतन पर एक पुरुष नियत किया जायगा और ५०) रु० महीना उसे आफिस व्यय के लिये दिया जायगा, तथा २०००) रुपया उन लोगों को पुरस्कार के लिये दिया जायगा जो लेखों द्वारा इस कार्य में सहायता करेंगे। गवर्न्मेण्ट का अनुमान है कि यह कार्य ५ वर्ष में समाप्त होजायगा, पर कहीं कहीं जहां उस सम्बन्ध में कार्य हो चुका है, कम समय लगेगा। अतएव सम्पूर्ण व्यय डेढ़ लाख सोचा गया है। वास्तव में गवर्न्मेण्ट का यह उद्योग सराहनीय है। हमें आशा है कि एतद्देशीय लोग उसमें गवर्न्मेण्ट की सहायता करेंगे। गवर्न्मेण्ट ने राजपुताने को क्यों छोड़ दिया है यह समझ में नहीं आता। राजपुताने की जातियों का वृत्तान्त तो अवश्य होना चाहिए था। क्या हिन्दी के सम्पादकगण इसपर ध्यान देंगे?

*
* *

लाला बैजनाथ रायबहादुर, सदरआला, आगरे से लिखते हैं—"मेरा यह संकल्प है कि यूरप और एमेरीका के उन धनाढ्य और उद्योगी महात्माओं के जीवनचरित्र मुद्रित करूं कि जिन्होंने अपने देश की उन्नति में प्रयत्न किया और उसीके साथ भारतवर्ष के उन महात्माओं के भी चरित्र वर्णन करूं कि जिन्होंने अपना धन और समय लगाकर इस देश की सेवा की। इस पुस्तक में उन लोगों को जो जो कष्ट प्रारम्भ में उठाने पड़े और जिस रीति से कि उन्होंने उनको जीता और अन्त में कृतार्थ हुए, और किस रीति से उन्होंने अपने देश की सेवा के अवसर को हाथ से न जाने दिया, वर्णन किया जावे और धन के उपार्जन और व्यय के विषय में उनकी सम्मति क्या थी दिखलाई जावेगी। इस समय में प्रत्येक मनुष्य को इस भारतवर्ष में जीविकोपार्जन की चिन्ता लगी हुई है और किस रीति से धन की वृद्धि हो यही उत्कण्ठा है। इस पुस्तक द्वारा धनोपार्जन की शुद्ध और धर्म्मानुकूल रीति निरूपण की जायगी और धनाढ्य पुरुषों के लिये यह दिखाया जावेगा कि वे अपने धन का कुछ भाग परोपकार में किस प्रकार लगा सकते हैं। मेरे पास यूरप और एमेरिका के और इस देश के कई महात्माओं के जीवनचरित आ गए हैं, परन्तु पुस्तक पूरी होने के लिये यहां के बहुत से लोगों के जीवनचरित्रों की आवश्यकता है। आपके पाठकगणों से सविनय प्रार्थना है कि वे कृपा करके मेरे पास ऐसे महात्माओं के जीवनचरित्र भेज दें कि जिन्होंने अपने बाहुबल से धनोपार्जन किया और जो परोपकार में तत्पर हुए या हैं। यथार्थ जीवनचरित्र आना चाहिए। वर्तमान और गत महात्माओं

के जीवनचरित्र सब इस किताब में संक्षेपतः निरूपण किए जावेंगे"। आशा है कि इतिहास प्रेमीगण इस प्रार्थना पर ध्यान देंगे।

वर्षाऋतु वर्णन

[कालिदास के ऋतुसंहार से]

बारि फुहार भरे बदरा सोई
सोहत कुञ्जर हैं मतवारे।
बीजुरी जोति धुरा फहरैं
घन गर्जन शब्द सोई हैं नगारे।
रोर कौ घोर कौ ओर न छोर
नरेसन की सी छटा छवि धारे।
कामिन के मन कौ प्रिय पावस
आयौ प्रिये नव मोहनी डारे ॥ १॥

नीले सरोजन के दल की कहुं
लीनी मनोहर गाढ़ी लिलाई।
कीनी कहूं कजरा के कलाप की
सोभा सनी रमनीक निकाई।
गर्भवती अबलान की त्यों
छतियान की छीनी कहूं कमनाई।
घेरि रही हैं घटा नभ में चहुं
ओर अनौखी छटा छवि छाई ॥२॥

प्यासे पपीहन के कुल पै जल
जाचना त्रास भरी करवावत।
बारि के भार नये उनये झुकि
झूमि छटा अलबेली दिखावत।
बोरि सुधा जल सों वसुधातल
श्रौन मनोहर घोर सुनावत।
प्यारी अहो ! किमि बादल ये गति
मन्द महादल बांधिकै धावत ॥३॥

गर्जन ये घन की घन घोर
विथा जियकी बहु भांति बढ़ावत।
इन्द्र कौ चाप धरैं चपला गुन
काम कमान प्रतिञ्चा चढ़ावत।
तीखन ज्यों जलधार मयी पुनि
बानन की बरसा बरसावत।
गोरी ! ये बैरी बिदेसिन* के
मन कों बदरा बर जोरी सतावत ॥४॥

नीकी नई तृन घास जमी
मनु नीलम कूटि दिये हैं बिछाई।
त्यों उलहे दल कन्दली के
कल चारु चहूं दिसि देयं दिखाई।
बीरबहूटिन की अवलीन में
लाल लड़ीन की है समताई।
सेत सों भिन्न मनीनु सजी
रमनी सी बनी अवनी है सुहाई ॥५॥

मेहन की धुनि के सुनिबे कों
सनेह सने हिय माहिं सुखारे।
सोहैं सलौने सरूप सजे पख
चित्रित चन्द्रिका चारु संवारे।
प्रेम अलिङ्गन चुम्बन में रत
जोबन के मद में मतवारे।
नाचन लागे प्रिये ! मुरवागन,
बागन में बन में अब प्यारे ॥ ६ ॥

बहु बेग बढ़े गदले जल सों
तट रूख उखारि गिरावती हैं।
करि घोर कुलाहल व्याकुल ह्वै
थल कोर करारन ढावती हैं।
मरजादहि छांड़ि चलीं कुलटा
सम विभ्रम भौंर दिखावती हैं।
इतराति उतावरी बावरी सी
सरिता चढ़ि सिन्धु कों धावती हैं ॥७॥

तृन घास घने कुलहा उलहे
रँग नीले मनोहर मञ्जु लसैं।
मृगतीयन के मुख सों खुतरे
सुथरे थल दूबन के बिलसैं।

---

* अथवा वियोगिन के ॥

द्रुम बल्लिन में नव पल्लव की
कमनीयता देखि हिये हुलसैं।
गिरि विन्ध्य के कानन सुन्दर सो
सुठि सोभा समुन्दर से दरसैं ॥८॥

उत्पल के दल से जिनके सुठि
चञ्चल नैन बने कजरारे।
सो चहुं ओर संसङ्कित से
विहरैं मृगयूथ जहां अति प्यारे।
ऐसी नदीतट की बनभूमि
सुहाति मनोहर सी छवि धारे।
चित्त में चिन्तित होत युवा अति
व्याकुल वाके विलोकनहारे ॥९॥

[क्रमशः]

प्रलय

सृष्टि में जितने पदार्थ देखे जाते हैं, वे सभी उत्पन्न और नाश हुआ करते हैं। इस बात को हमलोगों ने साधारण रीति से निश्चय कर लिया है कि जो वस्तु उत्पन्न होगी, वह नाश को भी अवश्य प्राप्त होगी। इसी प्रकार पृथिवी के विषय में भी बहुत दिनों से हमारे प्राचीन आर्ष-शास्त्रकारगण निश्चय करचुके हैं कि पृथिवी का नाश अवश्य होगा। किन्तु यह ऐसी बात है, कि इस (प्रलय) के विषय में जरा ध्यान पूर्वक विचार करने से रोमाञ्च हो आते हैं और चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देने लगता है। प्रलय तो अवश्य होता आता है और होता रहेगा, परन्तु वह महाप्रलय जिसमें भूमण्डल मात्र का नाश होना सम्भव है, क्योंकर और कैसे होगा, तथा आधुनिक वैज्ञानिकों के इस (प्रलय) के विषय में क्या क्या मत निश्चित हो चुके हैं, उन्हींका नीचे संक्षेप में वर्णन किया जायगा।

प्राचीन समय के विद्वान् बड़ेही सूक्ष्मदर्शी अथवा सरल प्रकृति के थे, इसमें संदेह नहीं। वे लोग आज कल के समान युक्ति तर्क की जटिलता और कठिनता के भीतर नहीं जाते तथा बड़े बड़े सिद्धान्तों को अपनी आत्मिक दूरदर्शिताही से निश्चय कर लिया करते थे, किन्तु इसो आध्यात्मिक बल के न रहने ही से आजकल नित्य नए नए सिद्धान्त निश्चित हुआ करते हैं और फिर भी उनपर पूरा विश्वास नहीं रहता। अस्तु, सृष्टि में कोई मनुष्य दूरदर्शिता की परम सीमा तक न पहुंच सका, किन्तु बुद्धिरूपी आध्यात्मिक अणुवीक्षण यंत्र से आधुनिकविज्ञानवेत्ताओं ने सूक्ष्मदर्शन-शक्ति की तीक्ष्णता के कारण प्राचीन उक्ति के भीतर अनेकानेक सिद्धान्तों के आविष्कार किए हैं, इसमें सन्देह नहीं। जो कुछ हो परन्तु हमलोगों को साधरण मनुष्यों के सिद्धान्तों को त्याग कर वैज्ञानिक सिद्धान्तोंही से अपने प्रश्न के उत्तर पाने की आशा रखनी उचित है।

विज्ञानशास्त्र के ज्ञाता जिस विषय को निश्चित करदें, उसे विज्ञान का ही उत्तर समझना चाहिए। हमारे उपर्युक्त प्रश्न का उत्तर वैज्ञानिक अध्यापक क्लिफोर्ड ने सब प्रकार के मतों का मन्थन करके निश्चित किया है कि पृथिवी का नाश तो अवश्य ही है, किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि यह नाश अग्निद्वारा होगा वा जल द्वारा। अध्यापक जेवन्स ने भी वैज्ञानिक आलोचनाओं से निश्चय किया है, कि पृथ्वी ध्वंस होने में संदेह नहीं, परन्तु एक लाख वर्ष के पीछे महाप्रलय होने की सम्भावना है। तथापि यह दृढ़ता के साथ नहीं कह सकते कि एक लाख वर्ष के पहिले वा पीछे होगी। पाठकगण! इससे बढ़कर और क्या उपयुक्त उत्तर मिल सकता है? इस उत्तर से चाहे पाठकों को सन्तोष न हो, किन्तु अनेक योग्य विद्वान एकमत हो जिसके विषय में कहते हैं, उसीका सारांश मात्र दिखानाही इस लेख में उपयुक्त होगा।

भारतेश्वर श्रीमान् सप्तम एडवर्ड